श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ-जयतः

निर्भीक युवराज
भक्त-प्रह्लाद

श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति एवं तदन्तर्गत भारतव्यापी
श्रीगौड़ीय मठोंके प्रतिष्ठाता, श्रीकृष्णचैतन्याम्नाय
दशमाधस्तनवर श्रीगौड़ीयाचार्य केशरी
ॐविष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री

श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके

अनुगृहीत

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

द्वारा

प्रह्लाद-उपाख्यानपर दिये गये
प्रवचनोंसे संग्रहीत

गौड़ीय वेदान्त प्रकाशन

प्रथम संस्करण— १०,००० प्रतियाँ
गोपाष्टमी, १० नवम्बर, २०१३

प्रकाशन-मण्डली

अनुवाद	— वृन्दा दासी (दिल्ली)
टाइप	— प्राणकृष्ण दास, सुन्दरगोपाल दास
प्रूफ-संशोधन	— परमेश्वरी दास, शान्ति दासी
सम्पादन	— माधवप्रिय दास, अमलकृष्ण दास
ले-आउट	— शान्ति दासी
कवर-डिजाइन	— कृष्णकारुण्य दास
रेखा-चित्राङ्कण	— © श्यामरानी दासी
कवर-चित्र	— © श्यामरानी दासी एवं सत्प्रेम दास
आभार	— विजयकृष्ण दास, गौरहरि दास

प्राप्तिस्थान

श्रीरूप-सनातन गौड़ीय मठ
दानगली, वृन्दावन (उ०प्र०)
०९७६०९५२४३५

श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ
मथुरा (उ०प्र०)

श्रीरमणविहारी गौड़ीय मठ
बी-३, जनकपुरी, नई दिल्ली
०९८७१५७७३५४

श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ
राधाकुण्ड रोड, गोवर्धन (उ०प्र०)
०९६२७४२६३४३

श्रीराधामाधव गौड़ीय मठ
२९३, सैक्टर-१४
फरीदाबाद, हरियाणा
०९९११२८३८६९

श्रीश्रीकेशवजी गौड़ीय मठ
कोलेरडाङ्गा लेन
नवद्वीप, नदीया (प०बं०)
०९१५३१२५४४२

जयश्री दामोदर गौड़ीय मठ
चक्रतीर्थ रोड, जगन्नाथपुरी,
उड़ीसा
०६७५२-२२७३१७

खण्डेलवाल एण्ड सन्स
अठखम्भा बाजार,
वृन्दावन (उ०प्र०)
०५६५-२४४३१०१

Please visit us at www.purebhakti.com

इस लघु पुस्तिकाके प्रकाशनमें आंशिक आर्थिक सेवानुकूल्य प्रदानकर श्रीमती सुचित्रा तिलक बुद्धिराजा एवं श्रीमती वन्दना कमल शादीजा श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गके कृपा-भाजन हुए हैं। प्रकाशन-मण्डली इनके प्रति आन्तरिक कृतज्ञता ज्ञापन करती है।

समर्पण

हम यह ग्रन्थ गौड़ीय वेदान्त प्रकाशनके संस्थापक एवं श्रीचैतन्य महाप्रभुके मनोऽभीष्ट संस्थापक श्रील रूप गोस्वामी द्वारा प्रवर्त्तित विशुद्ध व्रजरस धाराको वर्त्तमान समयमें सम्पूर्ण विश्वमें अत्यधिक प्रभावशाली पद्धतिसे संरक्षित एवं प्रवाहित करनेवाले श्रीमन्महाप्रभुके नित्य परिकर अपने उन परमाराध्यतम श्रील गुरुदेव नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीके श्रीकरकमलोंमें समर्पित करते हैं, जिन्होंने इस जगत्में श्रीचैतन्य महाप्रभुके मतानुसार अमल प्रमाण श्रीमद्भागवतके प्रसङ्गों और उपाख्यानोंका विपुल रूपमें अनुकीर्त्तन किया है, जिसमें श्रीप्रह्लाद-चरित्र भी अन्यतम है।

—प्रकाशन-मण्डली

विषय-सूची

प्रस्तावना i

भगवान्‌का ऐश्वर्य १
प्रह्लादके आसुरिक पिता २
ब्रह्माजी द्वारा हिरण्यकशिपुको वर-प्रदान ३
हिरण्यकशिपु और प्रह्लादमें आकाश और पातालका भेद..... ४
मेरे पुत्रको मेरे जैसा बननेकी शिक्षा दो..... ४
हिरण्यकशिपुकी निराशा..... ९
बालक प्रह्लादकी प्रखर भक्ति १२
उच्च-चेतनामें स्थिति..... १५
हिरण्यकशिपुका क्रोध १९
प्रह्लादका वध करनेके विफल प्रयास..... १९
महान असुर हिरण्यकशिपुकी चिन्ता..... २३
प्रह्लादका पुनः पाठशाला जाना २४
प्रह्लाद महाराजका उपदेश—'भगवान्‌की आराधना अभीसे आरम्भ करो' २७
भौतिक जीवनकी नश्वरता..... २९
कृष्णभक्ति वास्तविक आनन्दको देनेवाली..... ३२
मनुष्य जीवन बहुमूल्य ३४
प्रह्लाद महाराज द्वारा असुर-पुत्रोंको सहमत करना ३६

हिरण्यकशिपु द्वारा प्रह्लादकी भक्तिकी परीक्षा.... ३९
नृसिंहदेवका आश्चर्यचकित कर देनेवाला
प्राकट्य ४१
भगवान्‌का प्रह्लादके प्रति वात्सल्य ४५
प्रह्लादकी दैन्यमयी प्रार्थना—"कृपया सभीको
मुक्त करो" ४८
दृढ़ श्रद्धा—प्रह्लादकी शक्तिका स्रोत..... ५०

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीका
संक्षिप्त परिचय..... ५५

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

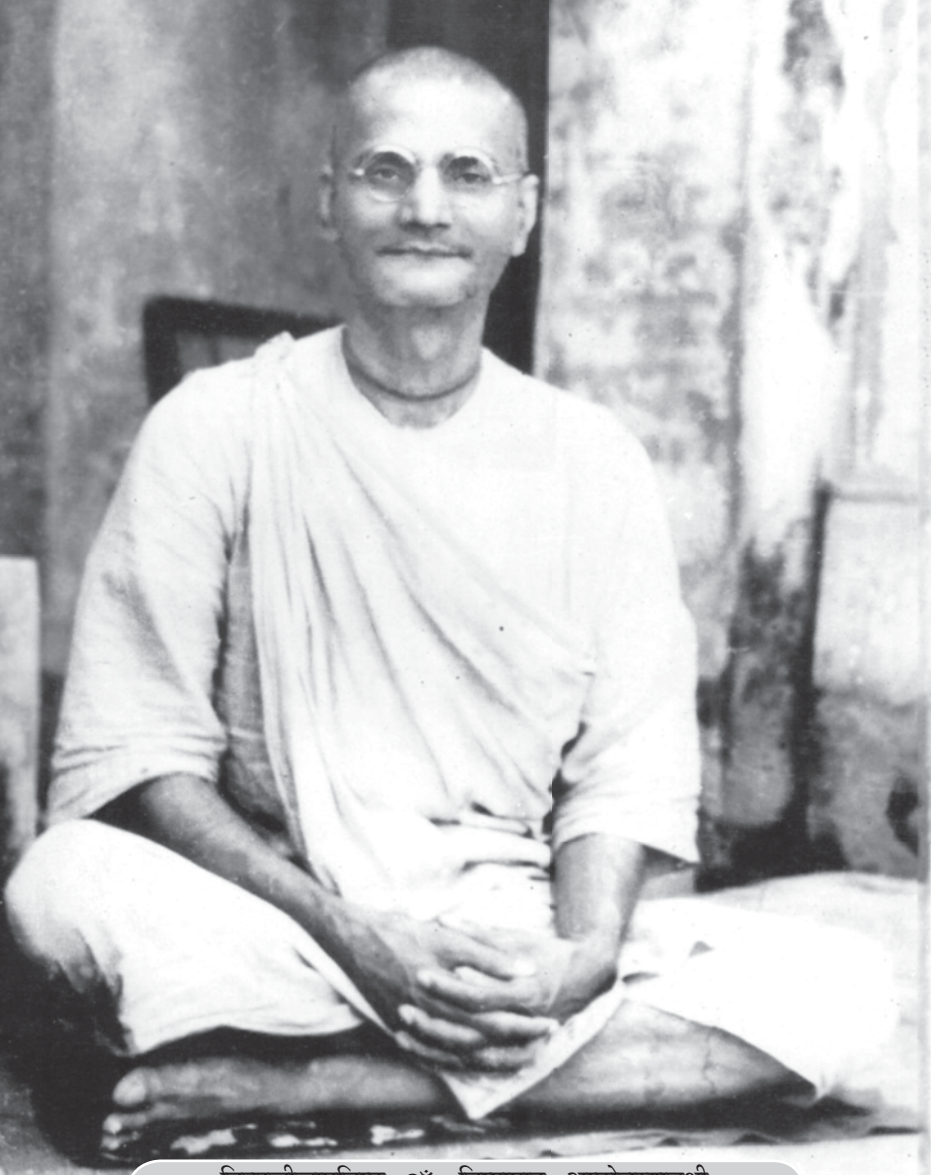

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज

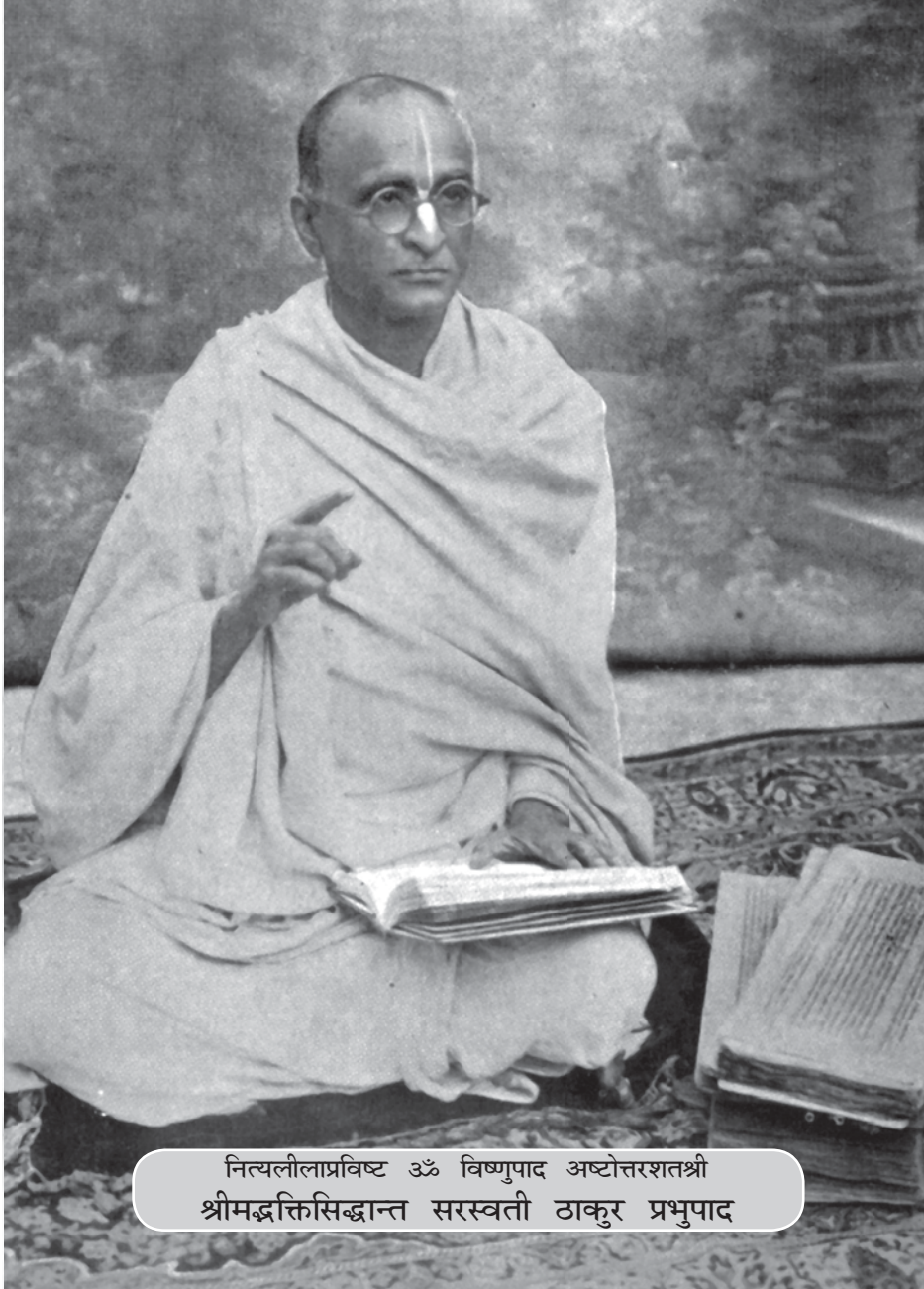

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर प्रभुपाद

श्रीपुरीधाममें विराजित
भगवान् श्रीश्रीनृसिंहदेवजी

प्रस्तावना

भारतके वेद-शास्त्र जगत्के मूल ग्रन्थ हैं। ये शास्त्र भगवान्के आंशिक अवतार श्रील व्यासदेवके द्वारा आजसे पाँच हजार वर्ष पूर्व लिपिबद्ध किये गये थे। ये प्राचीन शास्त्र अत्यन्त विस्तृत हैं और हमें भौतिक एवं आध्यात्मिक जगत्का पूर्ण ज्ञान प्रदान करते हैं। स्वयं श्रील व्यासदेवने श्रीमद्भागवतको इन शास्त्रोंका सार कहा है। यह श्रीमद्भागवतरूपी पवित्र ग्रन्थ मनुष्य जीवनके उद्देश्य, वास्तव और नित्य आनन्द प्राप्तिके मार्ग, भगवान् श्रीकृष्णके प्रति ऐकान्तिक एवं अहैतुकी भक्ति इत्यादि अनेक सर्वोत्तम सत्योंको प्रस्तुत करता है। श्रीमद्भागवतमें दृढ़तापूर्वक यह घोषित हुआ है कि श्रीकृष्ण भगवत्ताके मूल हैं—वे ही मूल अवतारी, नित्य-किशोर एवं सभी कारणोंके मूल कारण हैं। उन्हींसे प्रकटित अनेकानेक अवतार प्रत्येक युगमें विभिन्न रूपोंमें इस धराधामपर अवतरित होकर अधर्मका नाश एवं धर्मकी स्थापना करते हैं। इन समस्त अवतारोंकी अति सुन्दर और आश्चर्यजनक लीलाएँ ग्रन्थराज श्रीमद्भागवतमें वर्णित हैं। श्रीमद्भागवतके दशम-स्कन्धमें मूल-अवतारी भगवान् श्रीकृष्णकी उन माधुर्यमयी लीलाओंका वर्णन है जिन लीलाओंको भगवान्ने अपने भक्तोंपर कृपा करनेके उद्देश्यसे आजसे लगभग पाँच हजार वर्ष पूर्व इस पृथ्वीपर आकर सम्पादित किया था।

श्रीकृष्णलीलासे भी लाखों वर्ष पूर्व घटित प्रसिद्ध और आश्चर्यजनक—भक्त प्रह्लादकी रक्षाके लिए अवतरित

भगवान्‌के अर्द्ध-सिंह, अर्द्ध-मनुष्य अवतार—भगवान् नृसिंहदेवका प्रसङ्ग भी श्रीमद्भागवतमें वर्णित हुआ है। भक्त प्रह्लादका आविर्भाव असुरकुलमें हुआ था। उनके पिता हिरण्यकशिपु और चाचा हिरण्याक्ष भगवान् विष्णुके प्रति शत्रुताका भाव रखते थे। किन्तु इसके विपरीत भक्त प्रह्लाद अपनी शक्तिसे सम्पूर्ण ब्रह्माण्डमें व्याप्त भगवान् विष्णुके परमभक्त थे। बाल्यकालसे ही प्रह्लादका आदर्शमय चरित्र था। उनमें एक वैष्णवके समस्त सद्‌गुण विद्यमान थे। वे स्वयंको तृणसे भी अधिक तुच्छ मानते थे। वे सर्वदा ही दैन्यभावसे युक्त, सहिष्णु और ईर्ष्यारहित थे। वे विपत्तियोंसे तनिक भी विचलित नहीं होते थे। सांसारिक कामनाओंसे पूर्ण रूपसे मुक्त होनेके कारण उनके लिए समस्त भौतिक वस्तुएँ अति तुच्छ थीं। उनकी इन्द्रियाँ सर्वदा अनुशासित थी और बुद्धि भी स्थिर थी, अतः वे किसी भी प्रकारके वेगके वशीभूत नहीं थे।

दूसरी ओर भक्त प्रह्लादके पिता हिरण्यकशिपुका स्वभाव आसुरिक था और उनके पिताका जुड़वाँ भाई हिरण्याक्ष भी अत्यन्त नीच स्वभावका था। इन जुड़वे भाईयोंके जन्मके समय पृथ्वी और स्वर्गपर सभी प्रकारके अशुभ लक्षण दिखलायी दिये थे, जैसे—गायोंने दूधके स्थानपर रक्त देना आरम्भ कर दिया था, मेघ मवादकी वर्षा करने लगे थे, वृक्ष बिना किसी कारणके गिरने लगे थे, गधे इधर-उधर भागने लगे थे, पक्षी चिल्लाते हुए अपने घोसलोंसे उड़ने लगे थे, मादा गीदड़ें आग उगलने लगी थी, सूर्य और

चन्द्र धुन्धसे ढक गये थे तथा अशुभ ग्रह अत्यधिक चमकने लगे थे।

जैसे ही हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष नामक दोनों असुर भाइयोंने युवावस्थामें प्रवेश किया, उनकी देहमें असाधारण लक्षण प्रकाशित होने लगे। उनकी देह लोहे जैसी हो गयी और वे पर्वतके समान इतने ऊँचे हो गये मानो अन्तरिक्षको स्पर्श कर रहे हों। जब वे चलते थे तब पृथ्वी काँपने लगती थी। वे स्वयंको अत्यन्त चमकीले स्वर्णके अनेकानेक आभूषणोंसे विभूषित करते थे। उन आभूषणोंके कारण उनके विशाल शरीरोंके चमकनेसे ऐसा प्रतीत होता था मानो वे सूर्यको प्रत्येक दिशासे ढक रहे हों।

हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष अपनी दृष्टिमें पड़नेवाली प्रत्येक वस्तुको भोगनेकी इच्छासे सम्पूर्ण ब्रह्माण्डपर विजय प्राप्त करना चाहते थे। अपने अग्रज भाई हिरण्यकशिपुके द्वारा उत्तेजित किये जानेपर क्रोधी-स्वभावका हिरण्याक्ष अपने कन्धेपर गदा रखकर युद्धकी भावनासे समस्त ब्रह्माण्डमें घूमते हुए ऐसे व्यक्तिको ढूँढ़ने लगा जो उससे टक्कर ले सके। हिरण्याक्षने अपने मार्गमें आनेवाले प्रत्येक व्यक्तिको भयभीत कर दिया, देवतागण भी उसके भयसे भागकर छिप गये। अन्तमें उसे परमपुरुष भगवान् विष्णुसे ही युद्ध करना पड़ा, क्योंकि केवल भगवान् ही युद्धमें उसका मुकाबला कर सकते थे। अपने वराह अवतारमें भगवान्ने उस दाम्भिक असुर हिरण्याक्षसे बहुत लम्बे समय तक

युद्ध किया और अन्तमें उसके कानपर हाथसे प्रहार करके उसका वध कर दिया।

जब हिरण्यकशिपुको ज्ञात हुआ कि भगवान् विष्णुने उसके भाईका वध कर दिया है, तो वह बहुत दुःखित हो गया। हिरण्याक्षको रक्तपान करनेमें बहुत रुचि थी, इसलिए प्रतिशोधकी अग्निमें जलनेवाले हिरण्यकशिपुने अपने भाई हिरण्याक्षको विष्णुका मस्तक छेदन करके उन्हींके रक्तसे श्रद्धाञ्जलि देनेका प्रण लिया। हिरण्यकशिपुने सोचा कि विष्णु तो यज्ञमें दी गयी आहुतिके द्वारा ही जीवित रहता है, इसलिए यज्ञोंको ही बन्द करा देना चाहिये। इसी उद्देश्यसे हिरण्यकशिपुने असुरोंके बहुत-से दलोंको इधर-उधर भेजा, जो यज्ञोंमें व्यवहार होनेवाले घीको प्रदान करनेवाली गायों और यज्ञोंको करनेवाले ब्राह्मणोंका वध करने लगे। हिरण्यकशिपुने उन सभी मन्दिरों और गोशालाओंको तथा उन समस्त पेड़-पौधोंको भी नष्ट करनेका आदेश दिया जो गायोंका पोषण करते थे। उसने ब्राह्मणों और वेदोंका अनुगमन करनेवालोंका भी नाश करनेकी आज्ञा दी। इस प्रकार उस बलशाली असुरने पृथ्वीपर अत्यधिक अत्याचार करना आरम्भ कर दिया।

हिरण्यकशिपु अमर बननेके लिए दृढ़ सङ्कल्पयुक्त था जिससे कि वह सम्पूर्ण ब्रह्माण्डकी सत्तापर प्रभुत्व कर सके। इसी उद्देश्यसे उसने घोर तपस्या की। वह देवताओंके सौ वर्षों तक अपने पँजोंपर खड़ा होकर अपनी भुजाओंको ऊपर उठाकर ऊपरकी ओर देखता रहा। इस घोर तपस्याके

फलस्वरूप उसके सिरसे आग निकलने लगी और सम्पूर्ण ब्रह्माण्डमें व्याप्त हो गयी। देवता, पशु, पक्षी तथा समस्त लोकोंके प्राणी अत्यन्त व्याकुल हो उठे। यहाँ तक की पर्वत भी काँपने लगे और तारे टूट-टूट कर गिरने लगे।

उस समय सभी देवताओंने मिलकर जगत्के सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माजीसे प्रार्थना की। देवताओंकी प्रार्थना सुनकर ब्रह्माजी हिरण्यकशिपुके पास गये। ब्रह्माजी हिरण्यकशिपुको दीमकके पहाड़से घिरा हुआ देखकर बहुत आश्चर्य-चकित हुए। चीटियाँ उसकी मेदा, त्वचा, मांस और खून चाट गयी थीं। हिरण्यकशिपु केवल अपने प्राणोंको हड्डियोंमे सञ्चारित करके ही जीवित था। ब्रह्माजी हिरण्यकशिपुकी लगन और तीव्र तपस्यासे बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने अपने दिव्य कमण्डलुसे जलकी कुछ बूँदें हिरण्यकशिपुपर डालीं और हिरण्यकशिपु पूर्णतः सशक्त रूपमें दीमकके पहाड़से निकल आया। अब उसका शरीर नवनवायमान, बलशाली और सोनेकी भाँति चमक रहा था। तब ब्रह्माजीने उसे

अपने सामर्थ्यके अनुसार वरदान दिया। वरदान प्राप्तकर वह तीनों लोकोंपर विजय पानेके लिए निकल पड़ा। उसने सभी प्राणियोंको अपने अनुशासनमें कर लिया और अत्यधिक क्रूरतासे उनपर शासन करने लगा।

हिरण्यकशिपुके आतङ्कसे भयभीत होकर सभी देवता और ऋषि-मुनि बाध्य होकर उसकी पूजा और उसके तथाकथित गुणोंका गान करने लगे। उसने अपने आतङ्कसे अपने राज्यमें वैदिक नियमोंके प्रचलनको पलट दिया, जिससे समाजमें उत्पात उत्पन्न हो गया। वह इतना शक्तिशाली था कि उसने लोगोंके पुण्य और पापोंके फलको भी पलट दिया, अर्थात् उसने पुण्यात्माओंको कष्ट दिया और दुष्टोंको सुखी किया। यद्यपि समस्त पुण्य-आत्माएँ उसके प्रभावसे दुखी थीं, परन्तु केवल एक ही व्यक्ति उसके आतङ्कसे प्रभावित नहीं हुआ—वह था उसका पुत्र युवराज प्रह्लाद, जो अपनी भक्तिके बलसे सर्वत्र भगवान्‌के दर्शन करनेके कारण निर्भीक था।

हिरण्यकशिपुका बल अपार था, तथापि वह असन्तुष्ट और भगवान्‌के प्रति ईर्ष्यासे युक्त था। यद्यपि सारा ब्रह्माण्ड उसके

पैरके अँगूठेके नीचे था, तथापि वह अपने ही पुत्रको अपने अधीन नहीं कर पाया। उसने अपने साधु-पुत्र प्रह्लादपर क्रोध प्रकाश करनेके कारण अपना सर्वनाश कर डाला।

भक्त प्रह्लादकी शिक्षाएँ एवं उनके जीवन-चरित्रको जाने बिना एक सद्-वैष्णव बन पाना अति कठिन है। इसीलिए विश्वव्यापी गौड़ीय मठोंके प्रतिष्ठाता जगद्गुरु नित्यलीला-प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर श्रील प्रभुपादने अपने जीवन कालमें एक या दो बार नहीं, अपितु एक-सौ आठसे अधिक बार श्रीप्रह्लाद-उपाख्यानका कीर्त्तन किया एवं अपने आश्रितजनोंको भी प्रह्लाद-चरित्रका अनुशीलन करनेका आदेश दिया। श्रील प्रभुपादका पदानुसरण एवं उनकी इस आज्ञाको शिरोधार्य करते हुए हमारे परमाराध्य श्रील गुरुदेव नित्यलीला-प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजने भी अपने जीवन कालमें प्रत्येक वर्ष श्रीनृसिंह-चतुर्दशीके उपलक्ष्यमें एवं अन्यान्य अवसरोंपर श्रीमद्भागवतके इस अपूर्व उपाख्यानका कीर्त्तन किया है।

इस पुस्तिकाकी विषय-वस्तु श्रील गुरुदेवके द्वारा वर्ष १९९८ से वर्ष २००३ तक विदेशोंमें श्रीनृसिंह-चतुर्दशीके उपलक्ष्यमें श्रीमद्भागवत पुराण इत्यादि ग्रन्थोंसें प्रह्लाद-उपाख्यानपर अँग्रेजी भाषामें दिये गये प्रवचनोंसे संग्रहीत की गयी है।

प्रसङ्गवशतः श्रील गुरुदेवने जगत्के लोगोंकी व्यवहारिक समस्याओंको भी इस उपाख्यानके माध्यमसे इङ्गित करते हुए प्रह्लाद महाराजके चरित्र और शिक्षाओंसे उन समस्याओंका समाधान प्रस्तुत किया है।

हम आशा करते हैं कि इस पुस्तिकाको प्रस्तुत करनेके हमारे सामान्य प्रयाससे श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गका प्रीतिविधान होगा और इसकी विषय-वस्तु साधक-भक्तोंके लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

इस पुस्तिकामें भूल-त्रुटि रह जाना अस्वाभाविक नहीं है, श्रद्धालु पाठकगण ग्रन्थका सार ग्रहण करके हमारी इस तुच्छ चेष्टाको कृतार्थ करें। इति।

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराजकी तिरोभाव तिथि
६ नवम्बर, २०१३

श्रीहरि-गुरु-वैष्णव-कृपालेश-प्रार्थी
प्रकाशन-मण्डली

निर्भीक युवराज—भक्त प्रह्लाद

भगवान्‌का ऐश्वर्य

परम-पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण प्रत्येक जीवको अपने अचिन्तनीय सौन्दर्य और माधुर्यसे आकर्षित करते हैं। वे आत्माके अनुभवको प्राप्त किये हुए विभिन्न प्रकारके उत्तम श्रेणीके भक्तों द्वारा पूजित होते हैं। ये भक्त भगवान् श्रीकृष्णकी सेवाके स्तर, उनके प्रति अन्तरङ्गता (अर्थात् विश्रम्भ भाव) और उनकी भगवत्ताके ज्ञानके तारतम्यसे विभिन्न प्रकारके होते हैं।

पारमार्थिक उन्नतिकी प्रथम अवस्थाका भक्त वह है, जिसके लिए श्रीभगवान्‌के ऐश्वर्यका ज्ञान सर्वदा प्रधान या मुख्य रहता है। श्रीभगवान्‌का ऐसा भक्त परम सत्यके दिव्य ज्ञानको सम्पूर्ण रूपसे जानता है—कृष्ण कौन हैं, आत्माका स्वरूप क्या है, माया क्या है, दिव्य-प्रेम क्या है, भगवान् कृष्णके प्रति भक्तिके विभिन्न स्तर क्या हैं तथा श्रीकृष्ण एवं भक्तोंके प्रेमपूर्ण आदान-प्रदानमें कैसा अमृत और आनन्द प्राप्त होता है?

ऐश्वर्यभावसे परम पुरुषोत्तम श्रीभगवान्‌की उपासना करनेवाले भक्तोंकी श्रेणीके सर्वश्रेष्ठ उदाहरण हैं—भक्तराज प्रह्लाद। 'भक्तराज' अर्थात् कृष्णके प्रति प्रेमसे सम्पन्न महान भक्तोंके भी राजा। भक्तराज प्रह्लाद किस प्रकार भगवान्‌के अद्भुत और अतुलनीय भक्त हैं, इसे हम उनके हृदयमें

विद्यमान भगवान्‌के प्रति निस्वार्थ एवं अहैतुकी भक्तिकी चर्चा करके समझनेका प्रयास करेंगें। यदि हमें भगवान्‌का भक्त बनना है, तो हमें भक्त प्रह्लादके दैन्य, निष्कपटता और सहिष्णुताके आदर्शको अपने जीवनमें लाना होगा। इसके लिए सर्वप्रथम इन्द्रिय-तृप्तिकी लालसाको परित्यागकर ऐकान्तिक भक्तिकी इच्छाको वर्द्धित करना होगा।

हमारी भक्ति शुष्क-ज्ञान, इन्द्रिय-तृप्ति, हठयोग आदि तपस्याओं तथा त्याग, जागतिक पुण्य एवं सङ्कल्प आदि अन्यान्य अनावश्यक बाह्य प्रयासों (क्रियाओं) से आच्छादित नहीं होनी चाहिये। हमारी भक्ति निरन्तर तन, मन और वचनसे स्वतः ही कृष्णसेवाकी वृत्तिसे ओत-प्रोत होनी चाहिये। यदि हम अपनी समस्त इन्द्रियों और हृदयके भावोंको कृष्णसेवामें नियुक्त करेंगे, तभी हमारी चेष्टाएँ भक्ति कहलायेंगी।

प्रह्लादके आसुरिक पिता

भक्तराज प्रह्लादके पिता हिरण्यकशिपु वेदोंके परम विद्वान थे, उन्हें समस्त वेद कण्ठस्थ थे। परन्तु भगवान् श्रीकृष्णसे विमुख होनेके कारण उनका स्वभाव आसुरिक था। इस जगत्‌में जो भी व्यक्ति भगवान्‌के प्रति शत्रुताका भाव रखता है तथा जो सोचता है कि धन-ऐश्वर्यसे ही जीवनमें सुखी हुआ जा सकता है, वह निश्चित ही आसुरिक प्रवृत्तिका है। प्राचीन कालमें पृथ्वीपर रावण और हिरण्यकशिपु जैसे दो-तीन ही असुर थे, परन्तु आजकल प्रत्येक देशमें—सर्वत्र

ही रावण जैसे असुर हैं। बिना किसी कारणके वे इस जगत्‌का विनाश करना चाहते हैं।

यदि कोई स्त्री शुद्धभक्ति करना चाहती है तथा मछली, अण्डे, मीट इत्यादिका परित्याग करती है, तो उसका पति उसके विरुद्ध हो जाता है और उसकी भक्तिमें बाधाएँ उत्पन्न करता है। यदि पति भक्त बन जाता है, तो पत्नी विरुद्ध हो जाती है। यदि दोनों ही भक्ति करते हैं, तो उनके पुत्र विरोधी बन जाते हैं और यदि कोई पुत्र भक्तिका पालन करता है, तो माता-पिता विरोधी बन जाते हैं। इस प्रकार वर्त्तमान कालमें हम प्रतिदिन ही ऐसा देख पाते हैं कि यह सम्पूर्ण जगत् ही रावण और हिरण्यकशिपु जैसे असुर-स्वभाववाले लोगोंसे परिपूर्ण है।

हमें रावण और हिरण्यकशिपु जैसे लोगोंसे सावधान रहना चाहिये। भगवान् श्रीकृष्णके किसी शुद्धभक्तके आनुगत्यमें भगवान्‌के पवित्र नामोंका कीर्त्तन करके असुर लोगोंके प्रभावसे हम अपनी रक्षा कर सकते हैं।

ब्रह्माजी द्वारा हिरण्यकशिपुको वर-प्रदान

जब हिरण्यकशिपुकी तपस्यासे प्रसन्न होकर इस जगत्‌के सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माजीने उसे वरदान माँगनेके लिए कहा था, तब हिरण्यकशिपुने चतुरतापूर्वक उनसे निवेदन किया था—"मुझे यह वरदान दीजिये कि मेरी मृत्यु न तो आकाशमें हो, न धरतीपर; न नरकमें, न स्वर्गमें; मैं किसी अस्त्र अथवा शस्त्रसे ना मारा जा सकुँ; आपके द्वारा सृष्ट किसी भी

प्राणीसे मेरी मृत्यु न हो। आप मुझे यह भी वरदान दीजिये कि मेरी मृत्यु न तो दिनमें, न रातमें; न वर्षके किसी महीनेमें; न भीतर और न बाहर हो।" इस प्रकार ब्रह्माजीसे उसे ऐसा वरदान प्राप्त हुआ, जिससे प्रतीत होता था कि वह अमर हो गया है।

हिरण्यकशिपु और प्रह्लादमें आकाश और पातालका भेद

यद्यपि हिरण्यकशिपु और प्रह्लादमें पिता और पुत्रका सम्बन्ध था, तथापि उन दोनोंके विचारोमें बहुत अन्तर था। हिरण्यकशिपु अपने पुत्रपर क्रोधित होता था, परन्तु भक्त प्रह्लाद सदैव दैन्ययुक्त और सहिष्णु रहते थे। हिरण्यकशिपु असुर था, परन्तु उसका पुत्र प्रह्लाद एक भक्त होनेके कारण देव-स्वभावसे युक्त थे। यद्यपि एक असुरके पुत्रके लिए उच्च-श्रेणीका भगवद्भक्त होना अति अस्वाभाविक बात है, तथापि भगवान्‌ने किसी विशेष कार्यसिद्धिके उद्देश्यसे अपने भक्त—प्रह्लादको हिरण्यकशिपुके पुत्रके रूपमें आविर्भूत कराया। यद्यपि हिरण्यकशिपुके चार विलक्षण तथा अत्यधिक प्रभावशाली पुत्रोंमेंसे भक्त प्रह्लाद सबसे छोटे थे, परन्तु गुणोंमें वे सबसे बड़े थे।

मेरे पुत्रको मेरे जैसा बननेकी शिक्षा दो

दैत्योंने शुक्राचार्यको अपने पुरोहितके रूपमें वरण किया था। उस समय षण्ड और अमर्क नामक शुक्राचार्यके दो

पुत्र दैत्यराज हिरण्यकशिपुके राजमहलके निकट वास करते थे। अपने सबसे छोटे पुत्र प्रह्लादको अपने अन्यान्य पुत्रोंसे अधिक स्नेह करनेवाले हिरण्यकशिपुने उन्हें षण्ड और अमर्ककी पाठशालामें भेजा। षण्डका अर्थ है 'बैल' और अमर्कका अर्थ है 'आलोकरहित' अर्थात् 'अन्धकारमय'। बैलकी भाँति सदैव हृष्ट-पुष्ट होनेके लिए आहार हेतु इधर-उधर भ्रमण करनेवाले, जागतिक विषय-सम्पत्तिके कारण अहङ्कार करनेवाले, दूसरोंको भय प्रदान करनेवाले, कामुक तथा आत्मविद्याके ज्ञानसे रहित एवं परम-पुरुषोत्तम भगवान्‌के सम्बन्धमें मूल-तत्त्वोंको नहीं जाननेवाले व्यक्ति षण्ड और अमर्क जैसे हैं।

हिरण्यकशिपुने षण्ड और अमर्कको आज्ञा दी—"मेरे पुत्रको सांसारिक धर्मके कर्त्तव्य, भौतिक एवं आर्थिक समृद्धि, इन्द्रियतृप्ति एवं मुक्तिके विषयमें शिक्षा प्रदान करो। शत्रुओंको किस प्रकारसे पराजित किया जा सकता है, राज्योंको कैसे जीता जा सकता है और सत्यको व्यवहार-कुशलता और कूटनीतिके द्वारा कैसे छिपाया जा सकता है—इन सब विषयोंमें इसे निपुण कर दो।" इस प्रकार शुक्राचार्यके पुत्र षण्ड और अमर्कने नन्हें युवराज प्रह्लादको पढ़ाना आरम्भ किया।

एकबार भक्त प्रह्लाद पाठशालासे घरपर लौटे, तब उनकी माता कयाधुने उन्हें सुन्दर वस्त्र-अलङ्कारोंसे विभूषित किया और उन्हें उनके पिता हिरण्यकशिपुके पास लेकर आयी। जब हिरण्यकशिपुने अपने सुन्दर, सुशील पुत्रको देखा तो

उसने प्रसन्न होकर बालकको चुम्बन किया और उसे अपनी गोदमें बिठाकर पूछा—"मेरे प्रिय पुत्र! तुम बहुत

बुद्धिमान हो, मैं तुमसे अति प्रसन्न हूँ। तुमने पाठशालामें क्या शिक्षा ग्रहण की है? तुम जिसे सबसे श्रेष्ठ मानते हो, उसे मुझे बतलाओ।"

प्रह्लाद महाराजने अति विनम्रतासे उत्तर दिया,

तत् साधु मन्येऽसुरवर्य देहिनां
सदा समुद्विग्नधियामसद्ग्रहात।
हित्वात्मपातं गृहमन्धकूपं
वनं गतो यद्धरिमाश्रयेत॥

(श्रीमद्भा० ७/५/५)

"हे असुरवर्य अर्थात् असुरोंमें श्रेष्ठ! संसारके प्राणी 'मैं और मेरे' के झूठे अभिमानमें पड़कर सर्वदा ही अत्यन्त उद्विग्न रहते हैं। ऐसे प्राणियोंके लिए मैं यही ठीक समझता हूँ कि वे अधःपतनके मूल कारण घाससे ढके हूए अन्धकूपके समान इस घरको त्यागकर वनमें चले जायें तथा भगवान् श्रीहरिकी शरण ग्रहण करें।" अर्थात् श्रीकृष्णकी कथाके श्रवण, कीर्त्तन और स्मरणके माध्यमसे श्रीहरिके चरणोंका आश्रय ग्रहण नहीं करनेसे वनमें गमन करनेपर भी वह व्यक्ति अन्धकूप सदृश गृहका आश्रित ही है—ऐसा समझना चाहिये।

प्राचीन, टूटे-फूटे, जलरहित, घास-फूँससे ढके हुए कुँएको अन्धकूप कहते हैं। ऐसे कुँएमें जहरीले सर्प आदि रहते हैं। वास्तवमें देहात्मबुद्धिपर आधारित जीवन ही 'गृह-अन्धकूपम्' है। अर्थात् यहाँपर कृष्णभक्तिसे रहित सांसारिक जीवनकी तुलना अन्धकारमय कुँए (अन्धकूप) से की गयी है। यदि

कोई व्यक्ति किसी जङ्गलसे जा रहा हो और मार्गमें पुराना सूखा कुँआ हो, जो कि घास-फूँससे ढका होनेके कारण न दिखायी दे रहा हो, तो वह व्यक्ति उस कुँएमें गिर सकता है। ऐसे कुँएमें गिर जानेपर बाहर निकल पाना सहज नहीं होता और उसमें रहनेवाले सर्प आदि प्राणी उसे काटते रहते हैं, जिससे तड़पते-तड़पते वह मर जाता है। अपने बचावके लिए चिल्लानेपर भी कोई उसकी आवाजको सुनता नहीं है। उसी प्रकार कृष्णभक्ति रहित सांसारिक जीवन—जिसमें व्यक्ति अपनी पत्नी, बच्चे, परिवार आदिमें ही अत्यधिक रमा रहता है—एक गहरे अन्धकारमय कुँएके समान है। इस कुँएमें गिरनेपर बहुत कष्ट उठाने पड़ते हैं और बाहर निकल पाना अत्यधिक कठिन हो जाता है। यह बहुत भयानक परिस्थिति होती है। 'गृह' का अर्थ 'देह' और 'देहात्म-बुद्धि' भी है। जो व्यक्ति स्वयं (आत्मा) को देह मानता है, तो यह जानना चाहिये कि वह एक गहरे अन्धकारमय कुँएमें पतित हुआ है जहाँ कोई भी सुख नहीं है, अपितु केवल दुख-ही-दुख हैं। अतएव भक्त प्रह्लाद कह रहे हैं—"आत्माकी उन्नतिके मार्गमें अर्थात् जीवात्मा किस प्रकार वास्तविक कल्याण या मङ्गलकी ओर अग्रसर होगी?—इस विषयमें देह और देहात्मबुद्धि बाधक बनकर वास्तविक लक्ष्यको प्राप्त करनेसे रोकते हैं। अतः आत्म-साक्षात्कारमें बाधक इस देहात्मबुद्धिका परित्याग कर देना चाहिये तथा तत्क्षणात् वनकी ओर गमन करना चाहिये। किस वनकी ओर? श्रीहरिके चरणोंका आश्रय प्राप्त

करनेके उद्देश्यसे वृन्दावनकी ओर गमन करना चाहिये तथा वहाँ जाकर सांसारिक सङ्ग परित्याग करके साधु-वैष्णवोंका सङ्ग करना चाहिये।"

हिरण्यकशिपुकी निराशा

हिरण्यकशिपुने भगवान् श्रीहरिके प्रति अपने पुत्रकी भक्ति और भावनाको देखकर हँसते हुए कहा—"बालकोंकी ऐसी बुद्धि अन्योंके द्वारा ही भ्रष्ट होती है। बालकोंको जो कुछ सिखाया जाता है, वे उसीको ग्रहण करते हैं, इसमें उनका क्या दोष?"

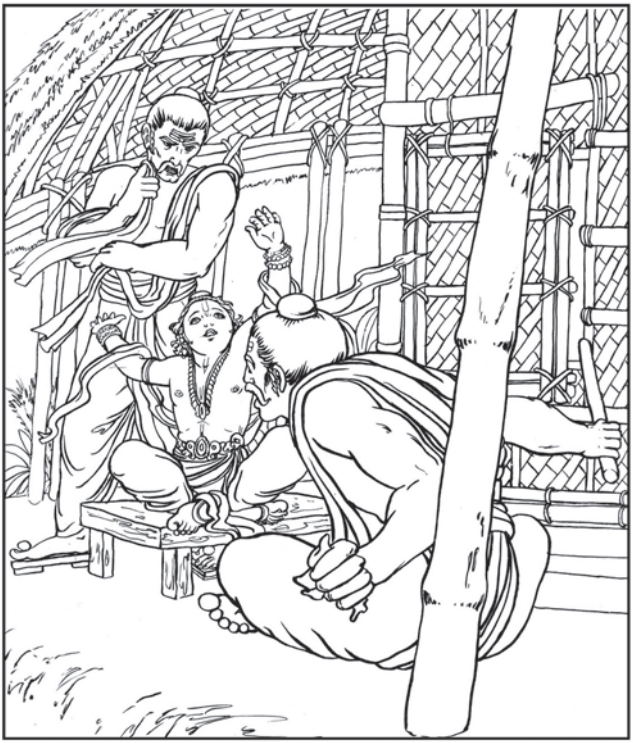

तब हिरण्यकशिपुने दोनों शिक्षकोंको आज्ञा दी—"प्रह्लादको पुनः पाठशाला ले जाओ और इसे राजनीति और कूटनीतिकी शिक्षा दो कि किस प्रकार प्रजाको अपने नियन्त्रणमें रखा जाये, दूसरोंको कैसे अधीन बनाया जाये और मेरे जैसा शक्तिशाली कैसे बना जाये। इसके अतिरिक्त सतर्कतापूर्वक बालक प्रह्लादकी रक्षा करो। देखना कहीं कोई विष्णुका भक्त पाठशालामें प्रवेशकर इसकी बुद्धि भ्रष्ट न करे।"

इस बार पाठशालामें जानेपर प्रह्लादके अध्यापक बहुत सावधान थे। उन्होंने प्रह्लादको बुलाकर प्रेमपूर्ण कोमल वचनोंसे उनकी प्रशंसा करते हुए विनम्रतापूर्वक उनसे पूछा–"हे वत्स प्रह्लाद, सच-सच बतलाओ, जो बातें तुमने अपने पिताके सामने बोलीं, तुम्हें वे सब बातें किसने सिखलायी हैं?"

भक्त प्रह्लादने उत्तर दिया—"जिनकी प्राप्तिके मार्गस्वरूप भक्तियोगके विषयमें वेदोंके तात्पर्यको जाननेवाले विचक्षण व्यक्ति भी मोहित हो जाते हैं, उन्हीं सेवनीय भगवान्‌ने मुझे ऐसी बुद्धि प्रदान की है। हे ब्रह्मन! लोहेके निकट आनेपर जिस प्रकार चुम्बक अपनी शक्तिसे उसे आकर्षित करके अपनेसे संयुक्त कर लेता है, उसी प्रकार चक्रपाणि भगवान् विष्णु कृपावशतः अपने भक्तके चित्तको अपनी ओर आकर्षित करते हैं—इस विषयमें मेरी अपनी कोई स्वतन्त्रता नहीं है।"

प्रह्लादकी बातें सुनकर षण्ड और अमर्क बहुत क्रोधित हुए तथा वे दुःखी मनसे प्रह्लादको डाँटने लगे। दैत्यकुलका यह कुलाङ्गार दुर्बुद्धि प्रह्लाद हमारे अपयशका कारण है, इसकी तो छड़ीके द्वारा पिटायी करनी चाहिये। इस प्रह्लादने दैत्यवंशरूपी चन्दनके वनमें काँटेके वृक्षके रूपमें जन्म ग्रहण किया है।

इस प्रकार षण्ड और अमर्कने प्रह्लादको डाँट लगाकर उसे भय दिखलाया तथा पुनः उसे धर्म, अर्थ और कामकी शिक्षा देने लगे। कुछ मासके पश्चात् षण्ड और अमर्क

प्रह्लादको अपने साथ लेकर पुनः हिरण्यकशिपुके निकट पहुँचे। प्रह्लादने अपने पिताको उनके पैरोंमें झुककर प्रणाम किया। हिरण्यकशिपु अपने पैरोंमें झुके पुत्रको देखकर अति प्रसन्न हो गया और उसने प्रह्लादको आलिङ्गन करके परमानन्दका अनुभव किया तथा उसे अपनी गोदमें लेकर उसके सिरको चूमकर पुनः प्रश्न किया, "हे प्रह्लाद, हे आयुष्मान्! तुमने अपनी पाठशालामें जो शिक्षा ग्रहण की है, उसमेंसे कुछ मुझे बतलाओ?"

बालक प्रह्लादकी प्रखर भक्ति

बालक प्रह्लादने उत्तर दिया—

श्रवणं कीर्त्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम्॥

इति पुंसार्पिता विष्णौ भक्तिश्चेन्नवलक्षणा।
क्रियेत भगवत्यद्धा तन्मन्येऽधीतमुत्तमम्॥

(श्रीमद्भा० ७/५/१३-१४)

"भगवान्‌के नाम, रूप, गुण, लीला, परिकर और धामादिके सम्बन्धमें श्रवण, कीर्त्तन तथा स्मरण करना, उनके चरणकमलोंकी सेवा करना, अनेक श्रेष्ठ द्रव्योंसे उनका पूजन करना, उनकी स्तुति करना, उनका दास बनना, उन्हें अपना सर्वश्रेष्ठ मित्र समझना और उनके प्रति पूर्ण समर्पण—ये नौ भक्तिके अङ्ग हैं। जो प्रथमतः स्वयंको विष्णुके प्रति समर्पण करनेके उपरान्त इस नवविधा भक्तिका

साक्षात् अनुष्ठान करता है, मेरे मतानुसार उसने ही उत्तम अध्ययन अथवा शिक्षा प्राप्त की है।"

भक्त प्रह्लाद द्वारा वर्णित नवधा-भक्तिका भलीभाँति पालन करनेके लिए हमें सर्वप्रथम स्वयंको एवं अपनी इन्द्रियोंको श्रीगुरुदेवके चरणोंमें अर्पित करना होगा। श्रीगुरुदेव भी भगवान् हैं। कैसे? वे आश्रय-भगवान् हैं और श्रीकृष्ण विषय-भगवान् हैं, गुरुदेव सेवक-भगवान् हैं और श्रीकृष्ण सेव्य-भगवान् हैं।

अतः सर्वप्रथम हमें श्रीगुरुदेवके चरणकमलोंमें पूर्ण रूपसे आत्म-समर्पण करना होगा, अपना सर्वस्व उन्हें समर्पित करना होगा, तत्पश्चात् जब हम उनसे श्रवण करेंगे, उनकी सुनी हुई वाणीका कीर्त्तन करेंगे, तभी हमें भक्ति प्राप्त होगी। श्रीगुरुका पदाश्रय ग्रहण किये बिना एवं उनके चरणोंमें आत्म-सर्म्पण किये बिना यदि श्रवण, कीर्त्तन, स्मरण अथवा अन्य कुछ सेवा कार्य इत्यादि किये भी जायें, यहाँ तक कि तीन लाख नाम जप भी किया जाये, तो भी उसका कोई मूल्य नहीं होगा। ऐसी क्रियासे केवल सांसारिक-सुख ही प्राप्त होंगे अथवा स्वर्गकी प्राप्ति मात्र ही होगी।

किन्तु यदि हम अपना सर्वस्व श्रीगुरुदेवके चरणकमलोंमें समर्पण करके निष्किञ्चन हो जायेंगे, अर्थात् जब हमारा यह विचार होगा कि 'मेरा कुछ भी नहीं है, सभी कुछ मेरे गुरुदेव और उनके आराध्य श्रीकृष्णका है' तभी उस व्यक्तिके द्वारा किया जानेवाला श्रवण-कीर्त्तन इत्यादि भक्ति कहलायेगा।

बालक प्रह्लादके मुखसे 'श्रवणं कीर्त्तनं' इत्यादि वचन सुनकर हिरण्यकशिपुके होंठ क्रोधसे काँपने लगे तथा हिरण्यकशिपु शुक्राचार्यके पुत्र षण्डको कहने लगा—"अरे ब्राह्मणाधम! दुर्मति! मेरी अवज्ञा करके मेरे शत्रुओंका पक्ष लेकर तूने बालक प्रह्लादको असार विष्णुभक्तिकी शिक्षा क्यों दी?"

गुरुपुत्रने कहा—

न मत्प्रणीतं न पर प्रणीतं
सुतो वदत्येष तवेन्द्रशत्रो।
नैसर्गिकीयं मतिरस्य राजन्
नियच्छ मन्यु कददाः स्म मा नः॥

(श्रीमद्भा० ७/५/२८)

"हे इन्द्रके शत्रु! आपके पुत्र प्रह्लादने जो कुछ कहा है, उसकी उसने न तो मुझसे, न ही अन्य किसी व्यक्तिसे शिक्षा प्राप्त की है। आप जो प्रह्लादमें विष्णुभक्ति देख रहे हैं, यह उसकी स्वाभाविक प्रवृत्ति है, अतएव मेरे प्रति क्रोध और दोषारोपण मत कीजिये।"

गुरुपुत्र षण्डके ऐसे वचन सुनकर हिरण्यकशिपुने पुनः प्रह्लादसे पूछा—"अरे अभद्र! अरे कुलनाशक! यदि गुरुने तुझे यह उपदेश नहीं दिया तो फिर तुझमें ऐसी दुर्बुद्धि कहाँसे आयी?"

बालक प्रह्लादने उत्तर दिया—

मतिर्न कृष्णे परतः स्वतो वा
मिथोऽभिपद्येत गृहव्रतानाम्।

अदान्तगोभिर्विशतां तमिस्रं
पुनः पुनश्चर्वितचर्वणानाम्॥

(श्रीमद्भा० ७/५/३०)

अर्थात् "संसारके लोग चबाये हुएको ही चबा रहे हैं। उनकी इन्द्रियाँ वशमें न होनेके कारण वे भोगे हुए विषयोंको ही पुनः-पुनः भोग करनेके लिए संसाररूप घोर नरककी ओर गमन कर रहे हैं। उनकी बुद्धि कभी भी अन्यों अर्थात् नामधारी गुरुके उपदेशसे अथवा अपनी चेष्टासे अथवा दोनोंके संयोगसे किसी भी प्रकारसे कृष्णकी ओर धावित नहीं हो सकती।"

उच्च-चेतनामें स्थिति

बालक प्रह्लादके कहनेका तात्पर्य यह है कि जिन व्यक्तियोंकी बुद्धि कृष्णमें स्थित न होकर इस भौतिक जगत्को भोगनेमें प्रवृत्त होती है, वे लोग जीवनके वास्तविक उद्देश्यको एवं अपने वास्तविक स्वार्थको नहीं समझ सकते। यह मनुष्य जीवन भगवान् श्रीकृष्णकी आराधनाके लिए मिला है, परन्तु भौतिकवादी लोग इस तथ्यको नहीं समझ पाते हैं, क्योंकि उनकी इन्द्रियाँ नियन्त्रित नहीं हैं। वे प्रतिक्षण पूर्ण रूपसे इन्द्रिय-तृप्तिमें ही निमग्न रहते हैं और अपने जीवनके मुख्य उद्देश्यसे हटकर निरन्तर चबाये हुएको ही पुनः-पुनः चबाते रहते हैं। इस भौतिक जीवनशैलीमें चबाये हुएको पुनः चबाकर ही सुख प्राप्त करनेकी चेष्टा रहती है, किन्तु इससे यथार्थ सुख प्राप्त

नहीं होता। इस प्रकारके जीवनका कोई भी लाभ नहीं है, किन्तु अनियन्त्रित इन्द्रियोंवाले लोग इस प्रकारके जीवनसे मोहित हो जाते हैं। इसलिए वे अज्ञानताके घनघोर राज्यमें प्रवेश करते हैं और असीम दुःख और विपत्तियोंसे परिपूर्ण नरकमय स्थितिकी और अग्रसर होते हैं।

न ते विदुः स्वार्थगतिं हि विष्णुं
दुराशया ये बहिर्थमानिनः।
अन्धा यथान्धैरूपनीयमाना-
स्तेऽपीशतन्त्र्यामुरूदाम्नि बद्धाः॥

(श्रीमद्भा० ७/५/३१)

अर्थात् जो मनुष्य भौतिक जीवनका आनन्द प्राप्त करनेके लिए चेष्टा कर रहे हैं या जो पूर्ण रूपसे पारिवारिक जीवनकी गतिविधियोंमें निमग्न हैं, वे इस बातसे अनजान रहते हैं कि जीवनका मुख्य उद्देश्य भगवान् विष्णुकी आराधना करके एवं उनके दिव्य धाममें जाना है। इसके स्थानपर ऐसे लोग अपना ध्यान अपने शरीर, बच्चों, पत्नी, घर, सम्बन्धी, नौकरी इत्यादिसे सुख प्राप्त करनेकी आशापर केन्द्रित करते हैं। इसका कारण है कि उनकी यह निश्चित धारणा होती है कि ये सब वस्तुएँ उन्हें सुख प्रदान करेंगी। परन्तु वास्तविकता यह है कि पारिवारिक और भौतिक समृद्धिका जीवनके मुख्य उद्देश्यसे कोई सम्बन्ध नहीं है। जीवनके वास्वविक उद्देश्यके प्रति अन्धे होनेके कारण वे किसी अन्य अन्धे व्यक्तिको अपने गुरुके रूपमें स्वीकार करते हैं, जो कि स्वयं इन्द्रिय-तृप्तिमें आसक्त होता है।

जिस प्रकार एक अन्धा व्यक्ति दूसरे अन्धे व्यक्तिका अनुगमन करते हुए पथभ्रष्ट होकर गढ्ढेमें गिर पड़ता है, उसी प्रकार संसारमें आसक्त व्यक्ति जगत्‌में आसक्त अन्य व्यक्तियोंके द्वारा परिचालित होकर कर्मफलकी दृढ़ बेड़ियोंमें बन्धकर पुनः-पुनः भौतिक जीवनके त्रितापको भोगते रहते हैं।

नैषां मतिस्तावदुरुक्रमाङ्घ्रिं
स्पृशत्यन्र्थापगमो यदर्थः।
महीयसां पादरजोऽभिषेकं
निष्किञ्चनानां न वृणीन् यावत्॥

(श्रीमद्भा॰ ७/५/३२)

"जब तक भौतिक जीवनके प्रति अत्यधिक आसक्त व्यक्ति भौतिक कल्मषसे पूर्ण रूपसे मुक्त वैष्णवोंकी चरणधूलिसे अपने शरीर-मन-चित्तको स्नान नहीं कराते, तब तक उनकी मति भगवान् उरुक्रमके (वे भगवान् जिनका असाधारण कार्योंके लिए गुणगान किया जाता है) चरणकमलोंके प्रति अनुरक्त नहीं हो सकती। केवलमात्र निष्किञ्चन वैष्णवोंके चरणकमलोंके आश्रयमें कृष्णभक्तिके अनुशीलनसे ही कोई व्यक्ति भौतिक कल्मषसे मुक्त हो सकता है।"

निष्किञ्चन वैष्णव कौन हैं? समस्त शास्त्रोंके तात्पर्योंमें पारङ्गत (निपुण), भगवान्‌के अनुभवको प्राप्त एवं कृष्ण-भक्तिरसका आस्वादन करनेके कारण संसारसे पूर्णतः अनासक्त व्यक्ति ही निष्किञ्चन वैष्णव हैं। वे इस जगत्‌में रहकर

भी जागतिक कामनाओंसे शून्य, विशेषतः कनक, कामिनी और प्रतिष्ठाकी कामनाओंसे सम्पूर्ण रूपसे रहित होते हैं। अपने परम कल्याणकी इच्छा रखनेवाले व्यक्तिको अवश्य ही ऐसे वैष्णवोंके चरणोंकी धूलिसे अपने मनको स्नान कराकर पवित्र करना होगा, अर्थात् ऐसे वैष्णवोंके उपदेशोंका श्रवण और पालन करना होगा। इसके फलस्वरूप उसकी बुद्धि भगवान्‌के चरणकमलोंमें स्थित हो जायेगी और उसके हृदयकी समस्त अवाञ्छित कामनाएँ दूर हो जायेंगी। अतः व्यक्तिको एक ऐसे शुद्ध प्रामाणिक गुरुकी शरण लेनी होगी, जिनका एकमात्र परम धन श्रीकृष्णकी एकान्तिक भक्ति ही है। तभी भौतिक चेतनाके दूषित प्रभावसे मुक्त हुआ जा सकता है।

हिरण्यकशिपुका क्रोध

बालक प्रह्लादके यह वचन सुनकर हिरण्यकशिपु क्रोधसे आग-बबूला हो गया। उसने बालक प्रह्लादको अपनी गोदसे भूमिपर फैंक दिया और चिल्लाकर बोला—"क्या तू यह कहना चाहता है कि मैं अन्धा और मूर्ख हूँ और मेरे गुरु शुक्राचार्य और उनके पुत्र षण्ड और अमर्क पाखण्डी हैं? क्या तू यह कहना चाहता है कि उनमें बुद्धि नहीं है और तू उनसे अधिक जानता है? क्या तू जानता है कि मेरे गुरु कितने महान हैं? वे इतने विद्वान और शक्तिशाली हैं कि मृत शरीरपर केवल कुछ बूँद जल डालनेसे ही वे उसे पुनः जीवित कर सकते हैं। क्या तू सोचता है कि मैं, मेरे गुरु तथा षण्ड और अमर्क इतने दिशाहीन हैं कि तू हमें आध्यात्मिक शिक्षाका पाठ पढ़ायेगा? मैं तेरा और तेरी भगवान्‌से सम्बन्धित मूर्खतापूर्ण बातोंका अन्त कर दूँगा।"

प्रह्लादका वध करनेके विफल प्रयास

हिरण्यकशिपुने अपने सेनापतिको आज्ञा दी—"इस बालकको शीघ्र यहाँसे हटाओ और तत्काल इसका वध कर दो।" हिरण्यकशिपुने अपनी सारी सेनाको ही राजकुमार प्रह्लादका वध करनेके लिए नियुक्त कर दिया। परन्तु अतिशय तीक्ष्ण और भयङ्कर दाँत एवं मुखवाले तथा ताँबेके रङ्ग जैसी दाड़ी और केशोंसे युक्त भीषण आकृतिवाले वे सभी राक्षस प्रह्लादके समक्ष शक्तिहीन और निस्तेज हो गये।

हिरण्यकशिपुने प्रह्लादको मारनेके लिए पुनः-पुनः प्रयास करते हुए सैनिकोंको एक-के-बाद-एक अनेक प्रकारकी आज्ञाएँ दी—"पागल हाथियोंको लाओ और इसपर आक्रमण करवाओ", "इसे विषधर साँपोंके बिलमें डाल दो, जो इसे डंसकर मार देंगे", "इसे बलपूर्वक कालकूट विष पान करवाओ", "इसे खूँखार एवं भूखे शेरोंके पिञ्जरेमें फैंक दो", "इसे चट्टानसे बाँधकर पहाड़की चोटीसे समुद्रमें फैंक दो", "इसे खौलते हुए तेलकी कढ़ाईमें डाल दो", "इसके ऊपर चट्टानें फैंककर इसे पीस दो।"

परन्तु प्रह्लादके वधकी प्रत्येक चेष्टाको विफल करके भगवान्‌ने प्रह्लादकी रक्षा की। सैनिकोंकी तलवारें उन्हें काट न सकी। प्रह्लादके शरीरका स्पर्श करते ही हाथियोंमें विद्युत सञ्चारित हो गयी और वे भयसे भागने लगे तथा उस समय मार्गमें आनेवाले सैनिकों और असुरोंको कुचल डाला। शेर प्रह्लादके प्रति मित्रतापूर्ण व्यवहार कर उन्हें चाटने लगे और जब प्रह्लाद पहाड़की चोटीसे समुद्रमें गिर रहे थे, तब भगवान् विष्णुने स्वयं आकर उन्हें पकड़ लिया और सुरक्षित रूपमें तटपर बिठा दिया।

अपने समस्त प्रयासोंको विफल होते देखकर हिरण्यकशिपुने एक और प्रयास किया। होलिका नामक उसकी एक सुन्दर और शक्तिशाली बहन थी। होलिकाको यह वरदान प्राप्त था कि प्रचण्ड आगमें प्रवेश करनेपर भी वह कभी नहीं जलेगी।

हिरण्यकशिपुने अपनी बहन होलिकाको तुरन्त बुलवाया और उससे निवेदन किया, "हे मेरी प्रिय बहन, मैं तुम्हारी मदद चाहता हूँ। मैंने प्रह्लादका वध करनेके अनेक प्रयास किये हैं, किन्तु उसका वध असम्भव दीखता है। अब मैं इस कार्यके लिए तुमपर निर्भर हूँ। मैं जानता हूँ कि यह कार्य तुम्हारे लिए अति सहज होगा। तुम प्रह्लादको अपनी गोदमें लेकर आगमें प्रवेश करना। इससे प्रह्लादका अवश्य ही नाश हो जायेगा और तुम्हें भी कोई हानि नहीं होगी। इसके लिए मैं तुम्हें प्रचुर धन-सम्पत्ति प्रदान करूँगा।" प्रह्लादकी बुआ धन-सम्पतिके लोभ और प्रह्लादके

प्रति वास्तविक स्नेहके अभाववशतः इस कार्यको करनेके लिए सहमत हो गयी।

एक प्रचण्ड अग्नि प्रज्ज्वलित की गयी, जिसकी शिखाएँ मानो आकाशको स्पर्श कर रही थीं। होलिकाने अपनेको सुसज्जित किया और प्रसन्नतापूर्वक युवराज प्रह्लादको अपने हाथोंमें उठाकर आगमें प्रवेश किया। परन्तु एक बहुत ही आश्चर्यजनक घटना घटी। भक्त प्रह्लादको अग्नि स्पर्श भी नहीं कर पायी, जब कि हिरण्यकशिपुकी बहन तुरन्त जलकर राख हो गयी। प्रह्लादके लिए अग्नि मानो बर्फके समान शीतल बन गयी और वे भगवान्‌के नामोंका कीर्त्तन करते हुए अग्निसे सुरक्षित निकल आये। हिरण्यकशिपु और उसकी सारी सेना प्रह्लादका बाल भी बाँका न कर पायी, क्योंकि श्रीकृष्ण सदैव प्रह्लादकी रक्षा कर रहे थे।

श्रीकृष्णने यह प्रतिज्ञा की है, "जो मेरी शरणमें आते हैं, मैं उनकी सदा ही रक्षा करता हूँ। भले ही सम्पूर्ण जगत् भी मेरे शरणागत भक्तके विरुद्ध क्यों न हो जाये, किन्तु कोई उसका बाल भी बाँका नहीं कर सकता।" यदि कोई पुरुषोत्तम भगवान्‌की या उनके किसी प्रामाणिक प्रतिनिधिस्वरूप शुद्ध गुरु जैसे श्रीनारद, श्रीव्यास, श्रीशुकदेव गोस्वामी, श्रीरूप गोस्वामी या श्रीसनातन गोस्वामी आदिकी शरण लेता है, तो यदि जगत्‌के समस्त लोग ही उसके विरुद्ध क्यों न हो जायें, उसका कोई कुछ भी बिगाड़ नहीं सकता। श्रीकृष्ण अपने शरणागत भक्तोंकी रक्षा करनेके लिए बाध्य हैं। इसलिए यद्यपि हिरण्यकशिपु अचिन्त्य शक्तिशाली

था और अपने पुत्रको मारनेका प्रयास कर रहा था, परन्तु उसके समस्त प्रयास विफल हो गये।

महान असुर हिरण्यकशिपुकी चिन्ता

भक्त प्रह्लादको मारनेमें अपने समस्त प्रयासोंको विफल हुआ देखकर हिरण्यकशिपु चिन्तित हो उठा—"मैंने इसे मारनेके सभी प्रयास किये, परन्तु मेरे समस्त प्रयास विफल

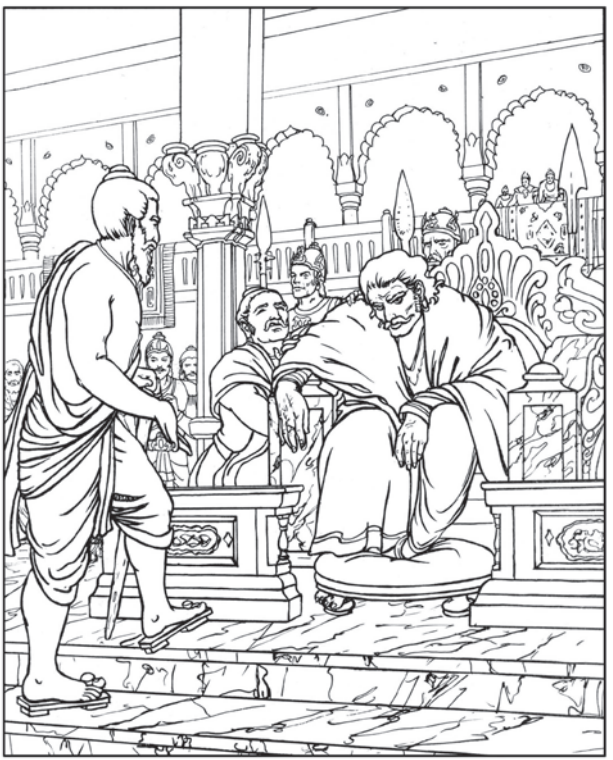

हो गये। कदाचित् इस बालकके पास कुछ रहस्यमयी शक्तियाँ हैं, जिससे यह मुझे ही मार देगा।" प्राचीन कालमें ब्रह्मासे वरदान प्राप्त करनेके उपरान्त हिरण्यकशिपु यह सोचने लगा था कि वह अमर हो गया है, परन्तु अब वह भयभीत हो गया। वह असुर जिसने बहुत बड़ी शक्ति एकत्रित करके त्रिलोकपर नियन्त्रण प्राप्त कर लिया था, अब दुविधामें पड़ गया और अपनेको असहाय अनुभव करते हुए सोचने लगा—"ब्रह्मादि देवता या अन्य कोई भी मुझे मार नहीं सकते, परन्तु मैं इस बालकमें साक्षात् अपनी मृत्यु देखता हूँ।" ऐसे समयमें षण्ड और अमर्कने उसे सान्त्वना देते हुए कहा, "हे राजन्! आप चिन्ता न करें। आप त्रिलोकपति हैं और प्रह्लाद तो मात्र एक बालक है। आप उससे इतने विचलित और अशान्त क्यों हैं? आप तो उसे एक मच्छरके समान अपनी अँगुलियोंसे मसलकर मार सकते हैं।"

प्रह्लादका पुनः पाठशाला जाना

षण्ड और अमर्कने आगे कहा—"हमारे पिता शुक्राचार्य समस्त विद्याओंके स्वामी हैं। उनके आने तक प्रतीक्षा करें और तब तक हम आपके पुत्रकी शिक्षा जारी रखते हैं। हमारे पितामें ऐसी शक्ति है कि वे अपने दृष्टिपात मात्रसे एक मृत शरीरको जीवित कर सकते हैं और यदि वे कभी किसीपर क्रोधित हों और उनके नेत्र लाल हो जायें तो अपनी भ्रूओंको ऊपर उठानेमात्रसे ही वह उस व्यक्तिको

जलाकर राख भी कर सकते हैं। जब हमारे पिता लौट आयेंगे तो वह अपने युक्तिपूर्ण वचनोंसे इस समस्याका समाधान कर देंगे और प्रह्लादको ऐसा समझा-बुझा देंगे कि तब वह आपकी आज्ञानुसार ही चलेगा। तब तक इसे हमारे साथ जाने दीजिये।"

इस प्रकार भक्त प्रह्लाद अपने शिक्षकोंके साथ पुनः पाठशाला पहुँच गये। षण्ड और अमर्कने प्रह्लादकी आध्यात्मिक प्रवृत्तिको बदलनेका पुनः प्रयास आरम्भ कर दिया। उन्होंने प्रह्लादके मनमें उनके पिता जैसी भौतिक लोलुपताको जगानेका प्रयास किया। किन्तु प्रह्लाद तो अपने विश्वासमें निडरतासे स्थिर थे, अतः वे इन सबसे प्रभावित नहीं हुए। अपितु, वह शान्त बने रहते एवं मन-ही-मन कृष्णके नामोंका उच्चारण करते और उनकी लीलाओं और गुणोंका स्मरण करते।

एक दिन शिक्षकोंको किसी कार्यवश पाठशालासे अपने घर जाना पड़ा। उन्होंने बालक प्रह्लादको कक्षाकी देखभाल करनेके लिए नियुक्त किया और उसे आदेश दिया, "प्रह्लाद! हम कुछ कालके लिए जा रहे हैं। अन्य छात्रोंका ध्यान रखना। ये परस्पर झगड़ें नहीं। तुम्हारे निरीक्षणमें ये सभी शान्त रहें। हम शीघ्र ही लौट आयेंगे।"

जैसे ही शिक्षकोंने प्रस्थान किया, असुरोंकी सन्तान उन छात्रोंने खेलना आरम्भ कर दिया और उन्होंने प्रह्लादको भी खेलनेके लिए बुलाया। भक्त प्रह्लादने उनसे नम्रतापूर्वक प्रार्थना की, "अरे, मेरे मित्रो, असुर-पुत्रो, मेरी बात सुनो।

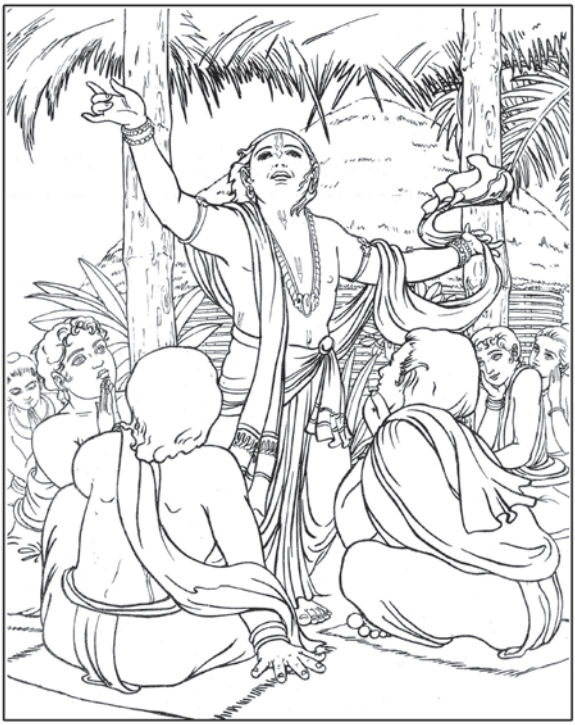

मैं तुम्हें कुछ कहना चाहता हूँ, जिससे तुम्हारा सारा जीवन सुख और आनन्दसे परिपूर्ण हो जायेगा। तत्पश्चात् तुम जाकर खेल सकते हो।" चूँकि उन असुर पुत्रोंकी प्रह्लादके प्रति अत्यधिक श्रद्धा थी, अतः वे सब पाँच-छह वर्षके बालक प्रह्लादके समक्ष एकत्रित हुए तथा उन्हें चारों ओरसे घेरकर बैठ गये। तब प्रह्लादने अपने सहपाठियोंको उपदेश देना आरम्भ किया।

प्रह्लाद महाराजका उपदेश—
'भगवान्‌की आराधना अभीसे आरम्भ करो'

कौमारं आचरेत् प्राज्ञो धर्मान् भागवतानिह।
दुर्लभं मानुषं जन्म तदप्यध्रुवमर्थदम्॥

(श्रीमद्भा० ७/६/१)

"अरे मेरे भाइयो, सुनो! इस बाल्यकालसे ही हमें परम-पुरुषोत्तम भगवान्‌का स्मरण करना चाहिये। इस जगत्‌में किसी भी वस्तुका स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है। कुछ लोगोंका विचार है कि सबकुछ प्रकृतिसे उत्पन्न हुआ है। परन्तु 'प्रकृति' का अर्थ क्या है? यह किसकी प्रकृति है? इसे समझना होगा। प्रकृति श्रीकृष्णकी शक्ति है। भगवान् श्रीकृष्ण करोड़ों ब्रह्माण्डोंकी सृष्टि और उनका नियन्त्रण कर सकते हैं और एक क्षणमें उनका विनाश कर सकते हैं तथा फिर दूसरे ही क्षण उनकी पुनः सृष्टि भी कर सकते हैं। वे अत्यन्त शक्तिशाली हैं। इसके अतिरिक्त वे हमारे और सभी जीवोंके भीतर बाहरका सभी कुछ जानते हैं, परन्तु हम उन्हें नहीं जानते। निरन्तर उनके नामोंके उच्चारण और स्मरणसे मैं उनके विषयमें थोड़ा बहुत जान पाया हूँ।

"हमें बचपनसे ही बल्कि इसी क्षणसे आध्यात्मिक जीवनका आरम्भ कर देना चाहिये। ऐसा नहीं सोचना चाहिये—'मैं कलसे करूँगा', क्योंकि ऐसा भी हो सकता है कि तुम्हारे लिए कल कभी आये ही नहीं। अपने बहुमूल्य समयको इस क्षणभङ्गुर सांसारिक जीवनका आनन्द लेनेमें

व्यर्थ नहीं करना चाहिये। अतः इसी क्षणसे तुम सब लोग मेरे साथ भगवान्‌के नामोंका कीर्त्तन करो, क्योंकि वृद्धावस्था और व्याधियोंका आना अनिवार्य है और व्यक्ति इस जीवनमें जो कुछ एकत्रित करता है—धन, पद, यश इत्यादि वह सब कुछ उसे यहीं छोड़कर जाना पड़ता है। वह इस जगत्‌की एक कौड़ी भी अपने साथ नहीं ले जा सकता। क्या तुम सब इससे सहमत हो?"

"हाँ, हम पूर्ण रूपसे इससे सहमत हैं," असुर बालकोंने उत्तर दिया। "आप निश्चय ही सत्य कह रहे हैं।"

यह सुनकर भक्त प्रह्लाद प्रसन्नतापूर्वक बोले—"मेरे प्रिय मित्रो! हे असुरपुत्रो! यह मनुष्य जीवन अनित्य है। परन्तु देही आत्मा नित्य है। इस मनुष्य जीवनका उद्देश्य अपने नित्य स्वरूपको जानना है, आत्म-अनुसन्धान करके अपने नित्य निवास-स्थान भगवान्‌के धामको लौटना है। इसलिए प्रत्येक प्राणी विशेषकर मनुष्य योनिको प्राप्त प्राणीको अवश्य ही भगवान् श्रीकृष्णकी भक्ति करनी चाहिये। वास्तवमें भक्ति जीवकी स्वाभाविक क्रिया है, क्योंकि भगवान् श्रीकृष्ण आत्माके रचयिता और स्वामी हैं, वे सभी जीवोंके कल्याणकी कामना करनेवाले तथा आत्माके प्रियतम हैं। प्रत्येक जीवका कर्त्तव्य भगवान्‌की शरण लेना और पूर्ण समर्पित हृदयसे उनकी सेवा करना है। ऐसा करनेसे जीव भौतिक इच्छाओंसे क्रमशः मुक्त हो जाता है और भगवान्‌की प्रेममयी सेवासे प्राप्त होनेवाले चिन्मय आनन्दका आस्वादन करने लगता है। इस प्रकार जब इस भौतिक जीवनसे

पूर्णतः मुक्ति प्राप्त होती है और भगवान्‌की प्रेममयी सेवा प्राप्त होती है, तभी वास्तविक आनन्दका अनुभव होता है।

"अतः, मेरे भाइयो, तत्क्षणात् परम आकर्षक भगवान् श्रीकृष्णकी आराधना और उनका चिन्तन आरम्भ कर दो। इसी क्षणसे भगवान्‌के नामोंका जप करना आरम्भ करो। एक दिन हम सभी वृद्ध होंगे और हमें मरना होगा, इसलिए समय रहते अभीसे भक्ति करो। अपने समयको राजनीति, छल, कपटतामें व्यर्थ मत करो। श्रीकृष्ण ही परम-पुरुषोत्तम भगवान् हैं। वे सर्वशक्तिमान हैं, अत्यन्त कृपालु हैं, उन्होंने अपनी समस्त शक्तियाँ, सौन्दर्य, माधुर्य और अहैतुकी कृपाको अपने नामोंमें भर दिया है। अतः उनके नामोंका उच्चारण, स्मरण और उनका चिन्तन करनेसे हम सबका परम मङ्गल होगा।"

बालक प्रह्लादके मुखसे यह सब सुनकर असुर-बालकोंमेंसे किसी एकने कहा, "हमें कृष्णके नामोंका उच्चारण और स्मरण क्यों करना चाहिये? बाल्यावस्थामें तो हमें खेलना चाहिये और तत्पश्चात् हमें धनको अर्जन करनेमें निपुण होना चाहिये, जिससे कि हम भौतिक सुखोंकी वस्तुओंका संग्रह कर सके। इन सबसे ही तो हमें सुखकी प्राप्ति होगी।"

भौतिक जीवनकी नश्वरता

बालक प्रह्लादने उत्तर दिया, "ये सब कार्य तुम्हें सुख नहीं देंगे। कौन जानता है कि तुम वृद्धावस्था तक भी पहुँचोगे कि नहीं। वृद्धावस्था तक पहुँचनेपर भी अनेक

रोगोंसे ग्रस्त हो जाओगे और अन्तमें मरना तो पड़ेगा ही। आज, नहीं तो कल या फिर सौ वर्ष बाद मृत्यु तो निश्चित है। किसी भी क्षण अकस्मात् वज्रपात होनेपर तुम तुरन्त मर सकते हो।"

यदि आप हवाई यात्रा कर रहे हों, तो अचानक मशीनमें खराबी हो सकती है और उसमें बैठे सभी लोग मर सकते हैं। उस समय शरीर और हड्डियाँ कहाँ जायेंगी, किसीको पता भी नहीं चलेगा। और यदि आप अकस्मात् मृत्युको प्राप्त नहीं भी होते और वृद्धावस्थाको प्राप्त होते हो तो आप लोग अस्सी वर्षकी आयुके उपरान्त हरिनामका जप करनेके लिए सीधे बैठ भी नहीं सकेंगे। उस समय अनेक प्रकारके रोगोंसे ग्रस्त हो जायेंगे। आपकी बहु बहुत-सी कठिनाइयाँ उत्पन्न करेगी—झाड़ुसे पीटेगी एवं गालियाँ देगी। उस समय आप नाम जप और भगवान्‌का स्मरण नहीं कर पाओगे। ऐसा भी हो सकता है कि आप बोलनेमें असमर्थ हो जाओ, पागल हो जाओ या सठिया जाओ। इस प्रकार अनेक कठिनाइयाँ आकर हमें नाम-कीर्त्तन और स्मरणसे विचलित कर देंगी।

इसलिए यह समझना अति आवश्यक है कि यह मनुष्य-जीवन केवल कृष्णसे अपने विस्मृत सम्बन्धको पुनः जाग्रत करनेके लिए प्राप्त हुआ है। मनुष्य-जीवनमें हमें जन्म-मृत्युके बन्धनकी अन्तहीन बेड़ियोंसे बाहर आनेका एक सुयोग मिला है। इस प्रकार हमें अपने नित्य स्वरूपको प्राप्तकर भगवान्‌की आनन्दमयी सेवामें पुनः नियुक्त होकर

शाश्वत जीवन-यापन करनेके लिए प्रयत्न करना चाहिये। आध्यात्मिक जीवनमें ही वास्तविक आनन्द है। भौतिक आसक्तियाँ विशेषतः गृहस्थ-जीवनके सुखका भ्रम व्यक्तिको भक्तिके मार्गका पालन करनेमें बाधा देता है। यदि आप विवाह करते हैं, तो आप अपनी नवविवाहिता पत्नीको और बिलखते हुए छोटे-छोटे बच्चोंको जो प्यारसे आपको 'पापा' बुलायेंगे, कैसे छोड़ पाओगे? यदि आपके माता-पिता वृद्ध हों, तो उन्हें कैसे छोड़ पाओगे? सुन्दर उद्यान, बाग, बगीचे, बँगले इन सबको छोड़ना कैसे सम्भव होगा? परन्तु एक बार भगवत्-चेतनाके जाग्रत होनेपर, जीव कृष्णका नित्य दास है—इस शुद्ध-ज्ञानके प्राप्त होनेपर और हमारा यथार्थ सुख केवल भगवान्‌की सेवा करनेमें है—ऐसा अनुभव होनेपर, जगत्‌के समस्त सम्बन्ध तुच्छ प्रतीत होंगे।

इसलिए प्रह्लाद महाराज बाल्यकालसे ही भजन करनेका उपदेश दे रहे हैं। अतः हमारे लिए यही उचित है कि हम बाल्यावस्थासे ही भौतिक-सुख और उन्नतिकी योजनाओं और महत्वाकाँक्षाओंका त्यागकर श्रीकृष्णके नामोंका कीर्त्तन और स्मरण करें। यह मनुष्य-जीवन दुर्लभ और अनित्य है, तथापि यह जीवन भगवत्-भक्तिका सुयोग प्रदान करता है।

अल्प परिमाणमें भी की गयी निष्कपट भक्ति हमें पूर्ण सिद्धि प्रदान कर सकती है। यदि हम सदा सुखी रहना चाहते हैं, तो इसके लिए हमें भक्तियोगका अनुशीलन करना होगा। अतः हमें बिना विलम्ब किये भगवान् कृष्णका भजन करना प्रारम्भ कर देना चाहिये।

कृष्णभक्ति वास्तविक आनन्दको देनेवाली

बचपनसे अर्थात् जीवनके प्रारम्भसे ही कृष्णके प्रति समर्पित हो जाओ। जिस समय भी आप इस सन्देशको सुनो, चाहे उस समय आप पचास सालके भी क्यों न हो, कुछ आपत्ति नहीं, आप तभीसे भक्तिका अनुशीलन करना प्रारम्भ कर सकते हैं। पूर्व-पूर्व जन्मोंमें एकत्रित सुकृत्तियोंके फलसे एक समय आप लोगोंको एक साधु-वैष्णवका साक्षात्कार हुआ था और उसके फलस्वरूप ही आज आप लोग साधुसङ्गमें इस प्रह्लाद महाराजके उपाख्यानरूप दिव्यज्ञानको श्रवण कर रहे हैं।

हमें अपने समयको इन्द्रिय-तृप्ति और व्यर्थके कार्योंमें नष्ट नहीं करना चाहिये, क्योंकि जिस किसी भी योनिमें हम जन्म-ग्रहण करेंगे, हमें इन्द्रिय-तृप्तिके साधन प्राप्त होंगे। पशुयोनिमें यदि हम कुत्ते या सुअर बनते हैं, तो वहाँ भी अनेक पत्नियाँ प्राप्त हो सकती हैं, उनके पालनके लिए धनकी भी आवश्यकता नहीं और किसी विवाह-विच्छेद (divorce) की भी आवश्यकता नहीं है। पशु योनियोमें हम निसङ्कोच कई नई पत्नियोंका भोग कर सकते हैं। मनुष्य-जन्ममें एक वर्षमें एक पुत्र या पुत्री ही होगी, कदाचित् ही किसी परिस्थितिमें किसीकी जुड़वाँ सन्तानें होती हैं। परन्तु सुअर, कुत्तोंके आठ, दस, बारह या सोलह बच्चे भी एक समयमें हो जाते हैं। इसलिए इस विषयमें पशु हमसे श्रेष्ठ हैं। किसी भी समय, किसी भी योनिमें हम पशुओंकी भाँति इन्द्रिय-तृप्ति कर सकते

हैं। इन्द्रियोंका भोग करनेमें पशु हमसे अधिक निपुण हैं। इसलिए हमें अपनी इन्द्रियोंको केवलमात्र भोग करनेमें नहीं लगाना चाहिये। जीवनके प्रारम्भसे ही श्रीकृष्णके नामोंका कीर्त्तन और स्मरण करना चाहिये।

इसके अतिरिक्त जैसा कि हम सभी जानते हैं कि दुःख बिना किसी निमन्त्रणके आता है। सभी प्रकारकी समस्याएँ—मृत्यु, बुढ़ापा, पड़ोसियोंके साथ झगड़ा और सरकारके द्वारा दिये जानेवाले कई कष्ट भी हमें झेलने पड़ते हैं। ये सभी क्लेश बिना किसी निमन्त्रण और सूचनाके आते हैं। सुखके लिए भी हमें ऐसे ही समझना होगा। पूर्व जन्मोंके पुण्य-कार्योंके प्रभावसे हम कुछ सुःख प्राप्त करनेके अधिकारी होते हैं। वे सुख स्वयं ही आते हैं, उन्हें पानेके लिए कुछ करनेकी आवश्यकता नहीं होती है।

यदि हम भगवान्‌में विश्वास रखें तो हमें हर प्रकारका सुख बिना किसी चेष्टाके प्राप्त होगा। भौतिक सुखके लिए हमें कदापि चिन्तित नहीं होना चाहिये। इस जन्ममें जागतिक सुखके लिए प्रयत्न मत करो और अपने दुःखोंको दूर करनेके लिए भी चिन्तित मत होओ, ऐसा करना हमारे जीवनका उद्देश्य नहीं है। हमारी इच्छा या अनिच्छाके बिना भी कष्ट बलपूर्वक आयेंगे और हमें उन्हें सहना ही होगा। हमें पूर्वमें किये गये अपने कर्मोंका फल भोगना ही पड़ेगा। अतः हम सुःख और दुःखके विषयमें चिन्तित होकर अपना समय क्यों व्यर्थ कर रहे हैं? अपितु, हमें भगवान् श्रीकृष्णके दिव्य नामोंका कीर्त्तन करना चाहिये।

हमें अपनी उर्जाको कृष्णके स्मरण और उनके दिव्यनामोंके उच्चारणमें लगाना चाहिये, जिसके फलस्वरूप हम सदाके लिए प्रसन्न और सुखी हो जायेंगे। हमें यह नहीं सोचना चाहिये कि उनके दिव्य नामोंका कीर्त्तन जड़-जगत्की एक ध्वनिमात्र है। 'हरे कृष्ण' मन्त्रका उच्चारण सब दुःखोंकी रामबाण औषधि है। यह महामन्त्र इतना शक्तिशाली है कि जन्म और मृत्युकी बेड़ीको तोड़ देता है। आप लोगोंको इसी मार्गको अपनाना होगा।

मनुष्य जीवन बहुमूल्य

सत्ययुगमें जहाँ सर्वत्र सत्यता और सत्वगुण व्याप्त था, मनुष्य एक लाख वर्षसे अधिक जीवित रहते थे। कुछ तो प्रायः अनश्वर हो जाते थे और मरते नहीं थे। त्रेतायुगमें मनुष्य दस हजार वर्ष तक और द्वापर युगमें एक हजार वर्ष तक जीवित रहते थे। इस कलियुग (छल-कपटके युग) में मनुष्यकी जीवन अवधि अधिकसे अधिक सौ वर्ष तक है। कलियुगमें मनुष्य अनियन्त्रित जीवन जीता है और खान-पानमें शराब, तम्बाकु, अण्डे, माँसादिका सेवन करता है। ये सब वस्तुएँ हमारी आयुका ह्रास कर देती हैं। इन वस्तुओंके सेवनसे मनुष्य कैन्सर और अनेक नई-नई व्याधियोंसे कष्ट पाता रहता है। इन व्याधियोंकी रोकथाम न तो अस्पतालोंमें है और न ही वैज्ञानिकोंके पास है। अनेक प्रकारके नए रोग जैसे एड्स इत्यादि उत्पन्न हो रहे हैं। हम नहीं जानते कि ये रोग कैसे उत्पन्न होते

हैं—परन्तु निश्चित रूपमें यह अनियन्त्रित और अत्यधिक इन्द्रिय-तृप्तिका परिणाम है।

प्रह्लाद महाराज अपने सहपाठियोंको यह शिक्षा दे रहे हैं—"यदि आप एक सौ वर्ष तक जीवित रहते हैं तो आधा जीवन अर्थात् पचास वर्ष निद्रामें निकल जाते हैं और आपके पास केवल पचास वर्ष ही बचते हैं। यदि आप अनुशासित नहीं हो, तो आपकी जीवन-अवधि और भी कम हो जायेगी। बचपनसे बीस वर्ष तक का समय खेलनेमें, पढ़नेमें, या अपनी जीवन यात्रा चलानेके लिए किसी कलामें निपुण होनेमें बीत जाता है। अधिकांश लोगोंके लिए अस्सीसे सौ वर्ष तक की आयुका समय बेकार होता है, उस समय उनका शरीर किसी कामका नहीं रहता। अनेक प्रकारकी बिमारियाँ उन्हें ग्रास कर लेती है। और जो बीचकी कुछ आयु बचती है, वह वैवाहिक जीवनमें चली जाती है।"

आजकल लोग एकसे अधिक विवाह करते हैं, फिर विवाह-विच्छेद (divorce) और फिर पुनः विवाह करते हैं। इस प्रकार कितनी ही बार वे विवाहित होते हैं। ऐसा करनेमें वस्तुतः उन्हें कुछ भी लाभ नहीं होता है। विवाहके फलस्वरूप सन्तान उत्पन्न होती है। आपको उनकी शिक्षा और पालन-पोषणकी आवश्यकताएँ पूरी करनी पड़ती हैं। समाजके साथ अपना स्तर बनाकर रखनेके लिए आपको कार, टी.वी., कम्पयूटर इत्यादिकी आवश्यकता होती है, घरोंको सुसज्जित रखनेके लिए नए-नए प्रसाधन लेने पड़ते

हैं। इन सबकी व्यवस्था करते-करते सारा समय निकल जाता है तथा श्रीकृष्णका स्मरण और अराधनाके लिए समय ही नहीं बचता।

प्रह्लाद महाराज द्वारा असुर-पुत्रोंको सहमत करना

प्रह्लादके वचनोंको सुनकर असुर-बालकोंने कहा—"आपने जो कुछ कहा, वह बहुत उत्तम है। हमें बतलाइये कि हम पुरुषोत्तम भगवान्‌की सेवा कैसे कर सकते हैं, उसकी विधि क्या है?" भक्त प्रह्लादने प्रत्युत्तर दिया—"आपको एक सद्‌गुरुका आश्रय लेकर परम-आत्मीयकी भाँति उनकी सेवा करनी होगी। उन्हें अपने अत्यन्त घनिष्ट सम्बन्धीकी भाँति अपने पिता-मातासे बढ़कर मानना होगा। उनसे दिव्यज्ञान प्राप्त करनेके लिए उनकी सेवा करनी होगी। गुरुसेवा करनेसे ही कृष्णसेवा करनेकी बुद्धि और सामर्थ्य प्राप्त होगा।"

बालक प्रह्लादके उपदेश सुननेके पश्चात् सभी असुर-बालक चकित हो गये और उन्होंने प्रह्लादसे कहा हम आपके विचारोंको समझ गये हैं, परन्तु कृपापूर्वक हमें यह भी बतलाइये कि आपने यह ज्ञान कहाँसे प्राप्त किया है?

तब भक्त प्रह्लादने बतलाया—"जब मेरे पिता तपस्याके द्वारा शक्ति प्राप्त करनेके लिए चले गये थे, तो उस समय मेरी माता कयाधु गर्भवती थी। किसी विशेष परिस्थितिवशतः उस समय वह परम भागवत नारदमुनिके सम्पर्कमें आयीं तथा उन्हींके आश्रममें रहने लगी। नारदजीने उन्हें कृष्ण-सेवाकी नित्य-विधिके सम्बन्धमें शिक्षा दी। माताके गर्भमें रहनेके

कारण मैंने भी नारदमुनिसे वेदों, पुराणों, उपनिषदों और श्रीमद्भागवतकी शिक्षाओंको सुना और जब मेरा जन्म हुआ, तो मैं नारदमुनिकी कृपा एवं उनकी शिक्षाओंके प्रभावसे स्वाभाविक रूपसे ही आत्मज्ञानके अनुभवसे सम्पन्न था।"

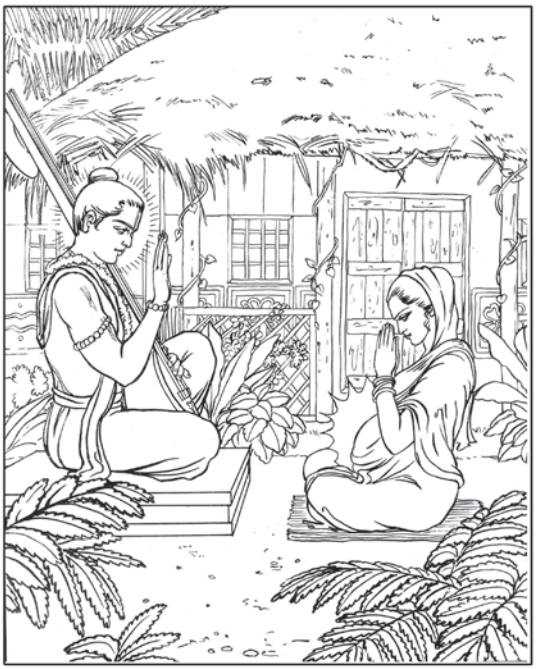

तत्पश्चात् बालक प्रह्लादने अपने सहपाठियोंसे कहा, "यदि तुम सब मेरे विचारोंसे सहमत हो, तो मेरे साथ आओ और हम सब आनन्दपूर्वक भगवान्‌के नामोंका

कीर्त्तन करेंगे।" तब सब सहपाठियोंने एक साथ मिलकर भगवान्‌के नामोंका कीर्त्तन आरम्भ कर दिया।

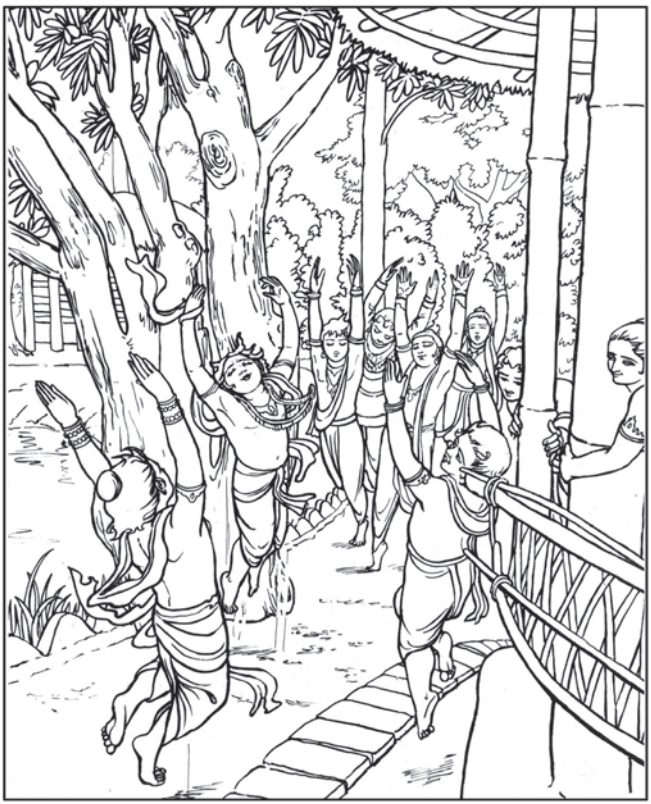

हिरण्यकशिपु द्वारा प्रह्लादकी भक्तिकी परीक्षा

जब षण्ड और अमर्कने देखा कि प्रह्लादके सङ्गके प्रभावसे असुर-बालकोंकी बुद्धि भी भगवान्‌में लग गयी है, तब उन्होंने भयभीत होकर शीघ्र ही दैत्यराज हिरण्यकशिपुके निकट आकर समस्त वृतान्त कह सुनाया। षण्ड और अमर्कके मुखसे इस बातको सुनकर हिरण्यकशिपुने दुःखी होकर सोचा, "मेरे पुत्रने जान-बुझकर मेरी उपेक्षा की है और उसने दूसरे बालकोंको भी अपनी ही भाँति मेरा विद्रोही बनाना प्रारम्भ कर दिया है। ये सब बालक अब दुष्ट और हानिकारक हो गये हैं।"

हिरण्यकशिपुने प्रह्लादको बुलवाया तथा रोषपूर्वक टेढ़ी दृष्टिसे देखते हुए प्रह्लादको धमकाते हुए कहा—"अरे दुर्विनीत, अरे मन्दबुद्धिवाले, अरे अधम, मेरे शासनका उल्लंघन करनेवाले प्रह्लाद! मैं तुझे यमालय भेज दूँगा। अरे मूढ़! मेरे क्रोधित होनेपर लोकपालों सहित त्रिभुवन काँप उठता है, किन्तु तू किसके बलसे भय रहित होकर मेरे शासनका उल्लघंन कर रहा है? क्या तू अपनी मृत्युसे भयभीत नहीं है? तुझमें शक्ति कहाँसे आती है? कौन तेरी सदैव रक्षा करता है?"

प्रह्लादने अत्यन्त दीनतापूर्वक उत्तर दिया—"हे असुरोंमें श्रेष्ठ! जो आपकी रक्षा करते हैं और सभीकी रक्षा करते हैं, वे मेरी भी रक्षा करते हैं। वे सर्वत्र विद्यमान हैं और सब कुछ उनमें ही है। वे भगवान् आपकी, मेरी और समस्त प्राणियोंकी शक्तिके स्त्रोत हैं।"

यह सुनकर हिरण्यकशिपु क्रोधसे काँपते हुए बोला—"अरे हतभागे! तेरे अनुसार मेरे अलावा अन्य कोई भी इस जगत्का ईश्वर है, तो फिर तुम्हारा वह हरि कहाँ है?"

"मेरे हरि सभी स्थानोंपर हैं।"

"तो फिर मैं उसे इस स्तम्भमें क्यों नहीं देख पा रहा हूँ? क्या वह इस स्तम्भमें भी है?"

"हाँ, ऐसा कोई स्थान नहीं है, जहाँ वे नहीं हैं। वे प्रत्येक अणुमें हैं, जीवमात्रके हृदयमें हैं। वे इस स्तम्भमें एवं यहाँ-वहाँ सर्वत्र हैं।"

"मुझे तो वह दीखता नहीं है।"

"परन्तु मुझे उनके दर्शन हो रहे हैं—मेरे हरि तो स्तम्भमें भी हैं।"

"अच्छा! मैं परीक्षा लूँगा कि तेरा हरि इस स्तम्भमें है या नहीं। मैं अब तेरा वध करूँगा और देखूँगा कि वह तेरी रक्षाके लिए आता है या नहीं।"

नृसिंहदेवका आश्चर्यचकित कर देनेवाला प्राकट्य

महाबलवान हिरण्यकशिपुने क्रोधपूर्वक प्रह्लादको ललकारते हुए अपनी तलवारको उठाया और अपने सिंहासनसे नीचे उतरकर अत्यन्त क्रोधपूर्वक अपनी मुट्ठीसे स्तम्भपर प्रहार किया, जिससे भयङ्कर गर्जन हुआ और स्तम्भ खण्ड-विखण्ड हो गया। हिरण्यकशिपु इधर-उधर देखने लगा कि गर्जनकी ध्वनि कहाँसे आयी है; तभी उसने भग्न स्तम्भमेंसे अर्द्ध-सिंह और अर्द्ध-मनुष्य देहवाले एक विचित्र और आश्चर्यजनक प्राणीको प्रकट होते देखा। उस प्राणीका सिंह जैसा अति भयानक और खूँखार सिर था तथा मनुष्यके समान अति बलवान और सुन्दर देह थी। अपने भक्त प्रह्लादके वचनोंकी रक्षा करते हुए भगवान् उस स्तम्भमेंसे श्रीनृसिंहदेवके रूपमें प्रकट हुए।

भगवान् नृसिंहदेव अत्यन्त क्रोधित और भयानक प्रतीत हो रहे थे। पहले तो हिरण्यकशिपु यही विचार करने लगा

कि—"यह मनुष्य है या सिंह है?" किन्तु किसी निष्कर्षपर नहीं पहुँचनेके कारण उसने उस विचित्र प्राणीपर अपनी गदासे प्रहार किया और तब दोनोंमें घनघोर युद्ध आरम्भ हो गया।

भगवान् नृसिंहदेवने हिरण्यकशिपुको अच्छी प्रकारसे अपने पञ्जोंमें जकड़ लिया, किन्तु जब वह अपनेको छुड़ानेकी चेष्टा कर रहा था, तब नृसिंहदेवने उसे थोड़ा ढीला छोड़ दिया और अन्ततः उसे अपनी पकड़से जाने दिया। इस भयङ्कर युद्धको देखकर तथा यह देखकर कि हिरण्यकशिपु भगवान्‌की पकड़से बच निकला है, देवता घबरा गये और चिन्ता करने लगे कि अब तो हिरण्यकशिपु नहीं मरेगा तथा वह हमें और ब्रह्माण्डके समस्त प्राणियोंको सताता ही रहेगा। देवता ऐसा सोचकर अत्यन्त व्याकुल हो उठे।

परन्तु इसमें चिन्ताकी कोई बात नहीं थी। भगवान् नृसिंहदेव हिरण्यकशिपुके साथ उसी प्रकार खेल रहे थे, जिस प्रकार गरुड़ साँपके साथ खेलता है। कुछ पल शान्त रहकर हिरण्यकशिपुने अपनी तलवार और ढाल उठायी और अति बलपूर्वक पुनः भगवान् नृसिंहदेवपर प्रहार किया। भगवान् नृसिंहदेवने सहज ही उसे कसकर पकड़ लिया और अपनी गोदमें ले लिया। नृसिंहदेवने सिंहसे भी भयङ्कर गर्जन करते हुए अपने बड़े-बड़े नखोंसे हिरण्यकशिपुके पेटको चीर डाला। उन्होंने उस असुरकी सारी आँतोंको निकाल लिया और अपनी गर्दनके आगे पीछे मालाकी भाँति पहन लिया। उस असुरका रक्त सर्वत्र इधर-उधर फैल गया। इस प्रकार वह असुर एक ही क्षणमें मारा गया। भगवान् क्रोधमें गर्जन कर रहे थे, जिस कारण सभी भयभीत थे।

श्रीभगवान् जगत्‌के सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माके वचनोंकी भी रक्षा करनेके लिए इस रूपमें आये। अर्द्ध-मनुष्य एवं अर्द्ध-सिंह

भगवान् नृसिंहदेवने सन्ध्याके समय, जब सूर्य अस्त हो रहा था, उस असुरको मारा। उस समय न दिन था, न रात थी, वह एक सामान्य वर्ष नहीं, अपितु अधिक मासयुक्त वर्ष था, भगवान्ने उसे बाहर और भीतर नहीं, अपितु दहलीजपर, पृथ्वीपर या आकाशमें नहीं, अपितु अपनी गोदमें और किसी अस्त्र और शस्त्रसे नहीं अपने सुन्दर और तीखे नखोंके द्वारा मारा।

भगवान्‌का प्रह्लादके प्रति वात्सल्य

उस समय भगवान् नृसिंहदेव इतने क्रोधित थे कि कोई उनके निकट नहीं जा पा रहा था। महादेव शिव और ब्रह्मा आदि कई देवता वहाँ उपस्थित थे, किन्तु वे सभी भगवान्‌से कुछ दूरीपर ही स्थित थे। लक्ष्मीदेवी भी वहाँ आयीं, वे ब्रह्माजी और शिवजीके साथ नृसिंहदेवको शान्त करना चाहती थीं, परन्तु उनमें भी भगवान्‌के समीप जानेका साहस नहीं हुआ। तब उन सभीने भक्त प्रह्लादको कहा—"प्रिय पुत्र! तुम्हें ही जाकर भगवान् नृसिंहदेवको शान्त करना होगा।" निर्भीक बालक प्रह्लाद हर्षपूर्वक दौड़कर भगवान् नृसिंहदेवके निकट पहुँचे और अपने हाथोंको जोड़कर भूमिपर गिरकर उन्हें साष्टाङ्ग प्रणाम करने लगे। उन्हें ऐसा करते देख भगवान् नृसिंहदेवने अपने अभय प्रदान करनेवाले हस्तकमलको प्रह्लादके सिरपर रख दिया। प्रह्लादने परमानन्दपूर्वक भगवान् नृसिंहदेवके चरणकमलोंको अपने हृदयपर धारण किया तथा एकाग्रचित्तसे नृसिंहदेवका स्तव करने लगे। स्तव सुनकर भगवान् नृसिंहदेव शान्त हो गये तथा अपने क्रोधको सम्वरण करके वात्सल्य स्नेहपूर्वक प्रह्लादको अपनी गोदमें बिठा लिया। द्रवित हृदयसे भगवान् नृसिंहदेवने भक्त प्रह्लादको प्यारसे सहलाना आरम्भ किया और अश्रुपूर्ण नेत्रोंसे कहा, "हे प्रह्लाद, मेरे प्रिय पुत्र! तुम्हारे पिताजीने तुम्हें इतने कष्ट दिये, जिसके कारण तुम्हें बहुत क्लेश सहना पड़ा है। मुझे आनेमें बहुत देरी हो गयी। मैं तो शीघ्र ही आना चाहता था, परन्तु आ नहीं पाया,

क्योंकि ब्रह्माने तुम्हारे पिताको वरदान दिया था कि वे किसी सामान्य वर्ष या मासमें नहीं मरेंगे, इसलिए मुझे उपयुक्त समयकी प्रतीक्षा करनी पड़ी। मैं यह भी चाहता था कि विश्व-ब्रह्माण्डके समस्त व्यक्ति तुम्हारे उत्तम स्वभाव और तुम्हारी भक्तिकी शक्तिके साक्षी बनें। अब मैं तुम्हें वरदान देना चाहता हूँ।"

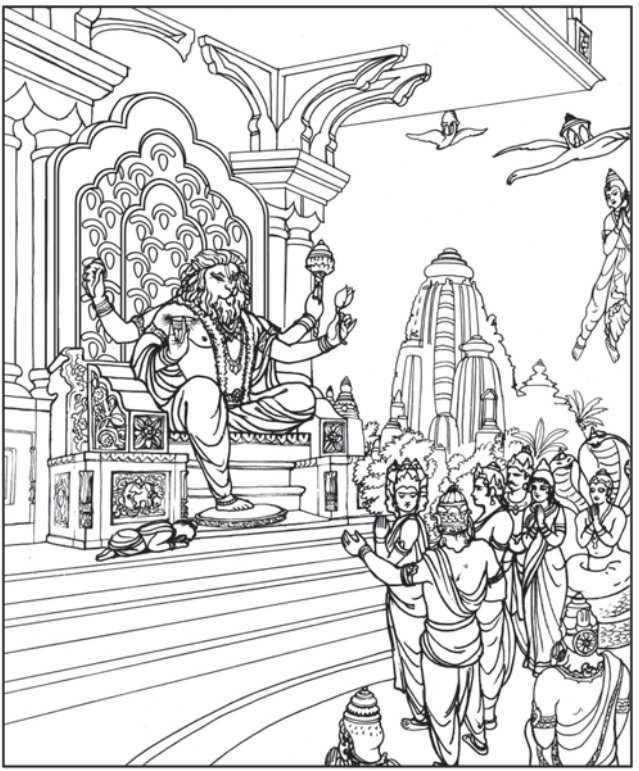

जब भगवान् श्रीनृसिंहदेवने प्रह्लादसे बार-बार वरदान माँगनेके लिए कहा तब प्रह्लाद मुसकराते हुए बोले—"हे प्रभु! मैं आपसे कुछ नहीं माँगना चाहता। जो व्यक्ति आपसे विषय आदि भोगोंके लिए प्रार्थना करता है, वह आपका दास नहीं, बल्कि व्यापारी है। मैं कोई व्यापारी नहीं हूँ, जो सेवाके बदले कोई इच्छा रखूँ। मैंने आपकी सेवा किसी वरदानको प्राप्त करनेके लिए नहीं की है। मैंने केवल आपको सन्तुष्ट करनेके लिए ही आपकी सेवा की है। मैं केवल इतना चाहता हूँ कि आप मुझपर प्रसन्न रहें।"

भगवान् नृसिंहदेवने पुनः कहा—"प्रह्लाद, मेरा दर्शन अमोघ है। तुम वरदान माँगो, जिससे मेरा यह आविर्भाव व्यर्थ न जाये। मुझे प्रसन्न करनेके लिए ही कुछ माँगो, अन्यथा मैं सन्तुष्ट नहीं होऊँगा। अतः कोई भी वर माँगो।"

तब प्रह्लादने कहा—"यदि आप मुझे कोई वर देना ही चाहते हैं, तो मैं आपसे यह प्रार्थना करता हूँ कि मेरे हृदयमें कभी भी कोई सांसारिक कामना उदित ही न हो।"

भगवान् नृसिंहदेवने कहा—"प्रह्लाद! तुममें कोई भी सांसारिक कामना नहीं है और हो भी नहीं सकती। अतः कुछ अन्य वर माँगो।"

तब प्रह्लादने कहा—"यदि आप मुझे कुछ देना चाहते हैं, तब एक वस्तु है, जो आप मुझे दे सकते हैं। मेरे पिताजीने अनेक घृणित कार्य किये हैं। उन्होंने साधुजनोंके प्रति अगणित पापपूर्ण आचरण किये हैं तथा आपकी

बहुत निन्दा की है। तथापि मैं प्रार्थना करता हूँ कि वे इन समस्त पापोंके फलसे मुक्त हो जायें।"

भगवान्‌ने प्रत्युत्तर दिया—"प्रह्लाद, तुम्हारे पिता इक्कीस पीढ़ियों सहित पहलेसे ही पवित्र हो चुके हैं, क्योंकि उनके वंशमें कुलको पवित्र करनेवाले तुमने जन्म-ग्रहण किया है। जो कृष्णके नामोंका कीर्त्तन और स्मरण करते हैं, ऐसे उत्तम श्रेणीके शुद्धभक्तोंके कुलकी इक्कीस पीढ़िया मुक्त हो जाती हैं। मध्यम अधिकारी भक्तोंकी चौदह पीढ़ियाँ मुक्त हो जाती हैं और कनिष्ठ भक्तकी सात पीढ़ियाँ तर जाती हैं। अतएव निश्चय ही तुम्हारे पिताजी पहलेसे ही मुक्त हो चुके हैं, अतः कुछ और माँगो।"

प्रह्लादकी दैन्यमयी प्रार्थना—"कृपया सभीको मुक्त करो"

भक्त प्रह्लादने उत्तर दिया, "मैं जानता हूँ कि आप मुझे बहुत प्रिय मानते हैं। यदि आप मेरी सेवासे प्रसन्न हैं तो मैं आपसे यही प्रार्थना करता हूँ कि आप इस ब्रह्माण्डके समस्त जीवोंको मुक्त कर दीजिये। इस जगत्‌में सभी जीव कष्ट पा रहे हैं। मैं उन जीवोंके समस्त पाप और कर्मफल लेता हूँ। मैं उनके लिए कष्ट उठानेको, यहाँ तक कि उन जीवोंके लिए नरक जानेको भी प्रस्तुत हूँ। मुझपर कृपा करें और मुझे यही वरदान दें।

"हे मेरे प्रभु! हे अच्युत! मैं हजारो-लाखों बार जन्म लेनेके लिए तैयार हूँ। किन्तु, मेरी केवल यही प्रार्थना है

कि आप मुझे जहाँ भी रखें, मैं सर्वदा ही आपके उत्तम भक्तोंके सङ्गमें आपकी एकान्तिक भक्तिमें रत रहूँ।"

भगवान् नृसिंहदेवने उत्तर दिया, "हे प्रह्लाद, निश्चय ही तुमने मुझे खरीद लिया है। मैं तुम्हारा हो गया हूँ। मैं तुम्हें सांसारिक वर देकर ठग नहीं सकता और न ही मुझे यह स्वीकार है कि तुम कष्ट भोगो। परन्तु मैं तुम्हारी प्रार्थनाको स्वीकार करता हूँ—अतः मैं वर देता हूँ कि जो कोई भी मेरे इस आविर्भावसे सम्बन्धित तुम्हारे लीला-चरित्रका श्रवण करेंगे या इस कथाको दूसरोंसे कहेंगे, उन्हें मेरी शुद्धभक्ति प्राप्त होगी।"

भगवान्का यह वरदान किस क्रममें फलीभूत होगा? पहले व्यक्तिको एक सद्गुरुकी शरण लेनी होगी। अर्थात् दीक्षा लेकर गुरुके निर्देशानुसार जीवन व्यतीत करना होगा। इस प्रकार जीवोंका क्रमशः उद्धार होगा।

भगवान्की शुद्धभक्तिमें निमग्न भक्त प्रह्लादको अपने कल्याणकी चिन्ता नहीं थी, क्योंकि वे जानते थे कि भगवान् सदैव उनका पालन-पोषण कर रहे हैं। भक्त प्रह्लाद कष्टोंके आने पर भी कभी विचलित नहीं हुए। वे सांसारिक इच्छाओंसे पूर्णतः मुक्त थे तथा उन्होंने मुक्ति अर्थात् भगवान्में ही मिलकर एक होना कदापि स्वीकार नहीं किया।

दृढ़ श्रद्धा—प्रह्लादकी शक्तिका स्रोत

भक्त प्रह्लादके जीवनमें बहुत-से कष्ट आये और उन्होंने उन सभी कष्टोंको सहन किया, परन्तु कभी भी प्रतिवाद नहीं किया। उन्होंने अपने पिताको शाप देनेके लिए कभी सोचा तक नहीं और न ही कभी उन्हें कटुवचनोंमें प्रत्युत्तर ही दिया, अपितु वे सर्वदा उनके प्रति विनम्र और आदरयुक्त बने रहे। यदि हम अपनेमें इन दिव्य गुणोंको लाना चाहते हैं, तो प्रह्लाद महाराजकी भाँति हमें भी भक्तियोगका अनुशीलन करना होगा। प्रह्लाद महाराज सदैव भगवान्‌की आराधना, उनका ध्यान और उनकी स्तुति करते थे, क्योंकि उन्हें यह दिव्यज्ञान था कि श्रीकृष्ण ही पुरुषोत्तम भगवान् हैं।

इस प्रकार प्रह्लाद महाराज सदैव भगवान्‌की भव्यता और ऐश्वर्यका ध्यान करते थे। वे जानते थे कि भगवान् सर्वत्र हैं। वे कहींपर भी किसी भी क्षण प्रकट हो सकते हैं। भक्त प्रह्लादको भगवान्‌की शक्तियोंका पूर्णतम ज्ञान था, वे सदैव भगवान्‌को अपने निकट ही दर्शन करते थे। उन्हें दृढ़ विश्वास था कि भगवान् सर्वदा उनकी रक्षा कर रहे हैं। इसलिए वे कभी तनिक भी चिन्तित नहीं हुए। वे भगवान्‌को प्रत्येक अणुमें और सबके हृदयमें सर्वत्र देखते थे तथा विपत्तियोंमें भी सदा प्रसन्न रहते थे। प्रह्लाद महाराजकी श्रद्धा इतनी दृढ़ थी कि श्रीकृष्णने सर्वदा उनकी विपत्तियोंसे रक्षा की। मृत्यु उनके निकट भी नहीं आ पायी।

यदि आपका मृत्य-काल आ गया है, तो निश्चित ही मरना होगा और यदि आपकी मृत्युका समय नहीं आया

है, तो कोई भी आपको मार नहीं सकता। प्रह्लादकी श्रद्धाने ही उन्हें निर्भीक बनाया। आप लोगोंको भी उनके समान निर्भीक होना होगा। मैं यह बात सबके कल्याणके लिए कह रहा हूँ। यदि मृत्यु आ रही है और बहुत-सी विपत्तियाँ भी आ रही हैं, तो हमें उनसे ऊपर उठनेकी चेष्टा करनी होगी। विचलित न होकर भगवान्‌के नामोंके जप-कीर्त्तनमें मनको स्थिर करके उनका स्मरण करना होगा। निरन्तर भगवान् श्रीकृष्णकी आराधना करनी होगी। यही प्रह्लाद महाराजकी शिक्षा है। यदि आप भगवान् श्रीकृष्णके ऐश्वर्य और विभूतियोंसे अवगत हैं कि वे परम शक्तिमान हैं, समस्त ब्रह्माण्डोंके रचयिता हैं और समस्त कारणोंके मूल कारण हैं, तो आप शान्त-स्थिरचित्तसे रह सकेंगे। भगवान् श्रीकृष्णका दिव्य रूप है और उनके अनन्त दिव्य गुण हैं। वे दिव्य सूर्यके समान हैं और जीव, जो उनके दास हैं, सूर्यकी किरण-कणके समान हैं। सभी जीव श्रीकृष्णकी शक्तिके कण हैं, जीवका स्वरूप तत्वतः भगवान्‌की भाँति सत्-चित्-आनन्द है, किन्तु भगवान् विभु मात्रामें सत्-चित्-आनन्द हैं और जीव अणु मात्रामें। जीवकी सत्ताका उद्देश्य भगवान्‌से प्रेमपूर्ण आदान-प्रदान करना है। हमें इसका अनुभव हो या न हो भगवान् सर्वदा ही हमपर अपनी कृपा और प्रेम वर्षण कर रहे हैं। प्रह्लाद महाराज सर्वत्र ही भगवान्‌के दर्शन करते थे, अतः उनका जीवन-चरित्र और शिक्षाएँ हमारे पारमार्थिक जीवनको उन्नत करनेके लिए अति उपयोगी एवं मार्गदर्शक हैं।

हिरण्यकशिपुकी मृत्युके पश्चात् भक्तराज प्रह्लाद राजा बने और उन्होंने अपने राज्यमें सर्वत्र भक्तिका प्रचार किया। उन्होंने सभीको श्रीकृष्णका कीर्त्तन, स्मरण एवं हरिकथा श्रवणके लिए प्रोत्साहित किया। इस प्रकार समस्त परिपूर्णताओंके कारण उनका राज्य वैकुण्ठकी भाँति प्रतीत होता था, जहाँ किसी भी प्रकारके दुःखका प्रवेश तक नहीं था।

तव करकमलवरे नखमद्भुतशृङ्गं
दलितहिरण्यकशिपुतनुभृङ्गम् ।
केशव धृतनरहरिरूप जय जगदीश हरे॥

हे केशव! हे नृसिंहरूप धारण करनेवाले! जगदीश! हे भक्तोंका कष्ट हरनेवाले हरे! तुम्हारी जय हो, क्योंकि तुम्हारे श्रेष्ठ करकमलमें अद्भुत अग्रभागवाला एक नख है, जिसने हिरण्यकशिपुके शरीररूप भ्रमरको विदीर्ण कर दिया। इसमें आश्चर्यकी बात यह है कि साधारणतः कमलके अग्रभागको भ्रमर ही विदीर्ण करता है, किन्तु यहाँ तो कमलके अग्रभागने ही भ्रमरको विदीर्ण कर डाला है।

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीका संक्षिप्त परिचय

श्रील गुरुदेव ॐविष्णुपाद अष्टोत्तरशत श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज १९२१ ई॰ में मौनी अमावस्याकी शुभ तिथिपर भारतवर्षके बिहार राज्यके बक्सर जिलेमें स्थित तिवारीपुर ग्राममें एक शुद्ध-वैष्णव परिवारमें आविर्भूत हुए थे।

१९४६ ई॰ के दिसम्बर मासमें श्रील गुरुदेवको अपने श्रीगुरुपादपद्म ॐविष्णुपाद अष्टोत्तरशत श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजका दर्शन प्राप्त हुआ एवं उसी समयसे श्रीचैतन्य महाप्रभुके द्वारा आचरित और प्रचारित गौड़ीय वैष्णवधर्मके प्रति उनका सम्पूर्ण-समर्पित जीवन आरम्भ हुआ।

जगत्के बद्धजीवोंके नित्य कल्याणके लिए उन्होंने अपने श्रीगुरुदेवके साथ सम्पूर्ण भारतमें श्रीचैतन्य महाप्रभुकी वाणी-प्रचारके कार्यमें सक्रिय सहयोगिता निभायी एवं अपने श्रीगुरुदेवके निर्द्देशानुसार विभिन्न गुरुत्वपूर्ण दायित्व ग्रहणकर मठ-मन्दिरकी सभी सेवाओंमें आत्मनियोग किया। प्रतिवर्ष श्रीचैतन्य महाप्रभुकी आविर्भाव-तिथिके उपलक्ष्यमें श्रीनवद्वीपधाम परिक्रमाके समय नवद्वीपधाममें असंख्य भक्तोंका समागम होता है। उस समय श्रील गुरुदेव श्रीनवद्वीपधाम परिक्रमाके कार्यभारके सञ्चालनका दायित्व ग्रहण करते थे। उनके गुरुपादपद्म श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी

महाराजने १९५४ ई॰ में उन्हें मथुरा स्थित श्रीकेशवजी गौड़ीय मठके मठ-रक्षकके रूपमें नियुक्त किया एवं प्रमुख गौड़ीय-वैष्णवाचार्योंके ग्रन्थोंका राष्ट्रभाषा हिन्दीमें अनुवाद करनेका निर्देश प्रदान किया। श्रील गुरुदेवने अपने सम्पूर्ण जीवनकाल तक परम उत्साह और यत्नके साथ इन सभी सेवाकार्योंको सम्पन्न किया, जिसके फलस्वरूप राष्ट्रभाषा हिन्दीमें प्रायः पचाससे भी अधिक प्रमुख पारमार्थिक गौड़ीय ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं। वर्त्तमानमें यह सभी ग्रन्थ अँग्रेजी तथा विश्वकी अन्यान्य प्रमुख भाषाओंमें अनुदित हो रहे हैं।

श्रीचैतन्य महाप्रभुकी वाणी एवं उसके अन्तर्गत अमल प्रमाण श्रीमद्भागवत एवं गौड़ीय-दर्शनका प्रचार करनेके लिए श्रील गुरुदेवने बहुत वर्षों तक सम्पूर्ण भारतका परिभ्रमण किया एवं १९९६ ई॰ से उन्होंने विदेशमें प्रचारसेवा आरम्भ की। परवर्त्ती पन्द्रह वर्षोंमें उन्होंने सम्पूर्ण विश्वकी प्रायः चौंतीस बार परिक्रमा की है। क्या देश, क्या विदेश, उनका प्रचारकार्य सदैव श्रीचैतन्य महाप्रभुके प्रधान परिकर श्रील रूप गोस्वामी एवं श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर प्रभुपादकी विचारधाराको केन्द्रीभूतकर उस धाराका अनुयायी रहा। यदि कहीं भक्तिसिद्धान्तोंमें कुछ भूल दिखलायी देती अथवा श्रीमन्महाप्रभुके आविर्भावके कारण अस्पष्ट होते अथवा कहींपर भक्तिशास्त्रोंकी व्याख्यामें कुछ परिवर्त्तन दिखलायी देता, तो श्रील गुरुदेव शास्त्रप्रमाण एवं युक्तिके द्वारा उन विचारोंका यथास्थान खण्डन तथा संशोधन करके

निर्भीक होकर यथार्थ सत्यको स्थापित करते थे। इस प्रकार वर्त्तमान समयमें उन्होंने गौड़ीय-सम्प्रदायकी विचारधारा, महिमा और गौरवका संरक्षणकर एक वास्तविक आचार्यका कार्य किया है।

श्रीलगुरुदेव (श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज) ने, २०१० ई॰ में २९ दिसम्बरको श्रीजगन्नाथपुरी धामके अन्तर्गत चक्रतीर्थ स्थित जयश्रीदामोदर गौड़ीय मठमें प्रायः नब्बे वर्षकी आयुमें अपनी भौमजगत्की लीला सम्वरण की। श्रीजगन्नाथ पुरीसे यात्रा करके श्रीचैतन्य महाप्रभुके विशेष प्रतिनिधि एवं उनकी अद्वितीय करुणाके मूर्त्तिमान विग्रह श्रील गुरुदेवने श्रीनवद्वीपधाममें समाधि ग्रहण की। श्रील गुरुदेव चिरकालके लिए ही अपनी अमृतमय-अप्राकृत-वाणी एवं अपने शरणागत-भक्तोंके हृदयमें विराजमान हैं।